



गो  
वि

वीरज

आत्माराम एण्ड सस  
दिल्ली • जामनगर • जयपुर • मेरठ



PRAN-GEFT  
by  
NEERAJ  
Rs. 3-00

●  
प्रकाशक  
रामसाम पुरी संचालक  
आत्माराम एण्ड संस  
काष्मीठी गेट  
बीड़ा रास्ता  
मार्द हीरा गेट  
बेगम बिज रोड  
दिल्ली  
बयपुर  
बाबलपुर  
भरठ

२४९५

द्वितीय संस्करण १९६१  
मूल्य तीन रुपये

●  
मुद्रक  
पुरेय प्रिंटर्स प्राइवेट  
लिमिटेड दिल्ली १

TRADE MARK ATMA RAM & SONS, DELHI-6

## दृष्टिकोण

मेरे कुछ मित्रों का आग्रह है कि मैं अपनी कविता की व्याख्या करूँ। जब मुझसे आग्रह किया गया तब मैं स्वीकार कर लिया पर जब जब व्याख्या करने बैठ हूँ तो पाता हूँ कि असमर्थ हूँ। मेरे विचार से कविता की और विघप रूप से गीत की व्याख्या नहीं हो सकती। वह राग वा कण्ठ का स्वर और मधुरों को बाणी से जाता है कुछ ऐसा अचिन्त्य अनुपम और अनमोह है कि पकड़ में ही नहीं आता। उसे पकड़ने के लिए तो स्वयं ला जाना पड़ता है और वहाँ जोकर पाना हो नहीं व्याख्या कैसे की जाय ?

परन्तु वहाँ असमर्थ है, वहाँ कविता जन्म लेती है और वहाँ कविता भी साधारण है वहाँ गीत आता है। जिस ज्ञान का मूल गद्य है और गाय ज्ञान का मूल गीत है। फिर किसे ज्ञान से गाय ज्ञान की व्याख्या कैसे की जाय ?

जीवन वहाँ तक एक है वहाँ तक वह काव्य है। वहाँ एक न होकर बहु भवेक है वहाँ विज्ञान है। अनवरण से एतत्त्व की ओर जाना कविता करना है और एतत्त्व से अनवरण की ओर जाना तर्क करना है। व्याख्या तर्क ही है।

तर्क का जर्म है काटना—टुकड़ करना। किन्तु कविता काटती नहीं टाड़ती रही छोड़ती है। अमर में मर के मान की शक्ति है तर्क मर में अमर की मर्ति का मास है काव्य। तर्क द्वारा जो सत्य प्राप्त होता है वह सत्य तो हो सकता है किन्तु सुन्दर नहीं और जो सुन्दर नहीं है वह आनन्द तो कभी भी नहीं बन सकता। किन्तु काव्य में सुन्दर के बिना सत्य की गति नहीं। इसीलिए साहित्य में सत्य में जब हम सत्य का प्रयोग करते हैं तब उसका घोष दिव्य और सुन्दर से व्यक्त करा देता है। हमें अकेला सत्य अभीष्ट नहीं सत्य का गुण ही हमारा इष्ट है। इसीलिए हम कहते हैं—'सत्यं निर्वं सुन्दरम्'।

एक बात और भी है अपनी कविता की व्याख्या करने का जर्म है अपनी शान्ति करना—जय लेटना की व्यंजना करना जिसके हम कवि हैं। वह जय लेटना है। अमर है इसीलिए आनन्दरक्षण है। तर्कित होने पर वह आनन्द नहीं रह पाती। काव्य भी आनन्द है—आनन्द से भी एक और पदार्थ की वस्तु—स्वर्गानन्द महोदर और उगका आनन्द भी उसकी अन्वयना में है तर्कित होने पर तो वह आनन्द न रहकर निराणन्द हो जायगा। इसी

लिए मैं कहता हूँ कि काव्य की व्याख्या नहीं की जा सकती ।

पर ही जिस प्रकार कुसुम के सुवास की व्याख्या न होकर उसकी पैलुरियों के रूप रंग (बाह्यावरण) के विषय में कुछ बताया जा सकता है उसी प्रकार काव्य के नाब की भीमांसा न सम्भव होकर भी उसके सामर्थ्य और उसके कारणों के विषय में कुछ संकेत दिये जा सकते हैं ।

जीवन के सत्ताइस पृष्ठ पढ़ने के बाद मेरी अनुभूति अब एक केवल तीन छंद प्राप्त कर सकी है—सौन्दर्य प्रेम और मृत्यु । इनका अर्थ मेरी कविता में क्रमशः चित्ति (सौन्दर्य) यति (प्रेम) और यति (मृत्यु) है । अपने पाठकों और आकाशकों की सुविधा के लिये मैं प्रत्येक की अलग-अलग व्याख्या करूँगा—

सौन्दर्य—

सौन्दर्य का अर्थ मेरी दृष्टि में संतुलन (Harmony), क्रम (Order), आकर्षण (Gravitation or Attraction) स्थिति-कारण (Force of existence) और सब मिलाकर चित्ति शक्ति है । उदाहरणार्थ मान लीजिये आपके सम्मुख चार व्यक्ति खड़े हैं । आप उन चार व्यक्तियों में से केवल एक का मुँह बतलाते हैं और शेष तीनों को नहीं । अब प्रश्न पड़ता है कि आपके पास वह शक्ति-सा पैमाना है जिससे आप-बोल कर अपने चार व्यक्तियों में से केवल एक को ही मुँह बतलाया जा सके । आप कहते हैं—पहले व्यक्ति की न तो मुँहा-कृति ही मुँह है और न उसका शरीर ही सुडीक है फिर उसे मुँह कैसे कह सकते हैं ? दूसरे व्यक्ति को आप यह कह कर असुन्दर ठहरा देते हैं कि उसकी मुँहाकृति (नाक कान आदि मोठ-बाबि) तो सुन्दर है पर उसका शरीर सुडीक नहीं । तीसरे व्यक्ति के लिये आप कहते हैं—उसका शरीर तो सुडीक है पर उसकी मुँहाकृति असुन्दर है—इसलिए उसे भी सुन्दर नहीं कहा जा सकता चौथा व्यक्ति जिसे आप न सुन्दर बतलाया है आप कहते हैं कि नष्ट से फिर एक उसका प्रत्येक शरीर-अवयव निर्दोष है । उसके सम्पूर्ण अर्थों में एक समुचित अनुपात (Proportion) है । न उसकी नाक मोटी है न आँख छोटी । न उसने हाथ मोटे हैं और न पाँव पतल अर्थात् उसका सम्पूर्ण शरीर समुचित है ही इसीलिए वह सुन्दर है । इसी दृष्टि से यदि आप अपनी आर भी दृष्टिपात करें तो आपको पता चलेगा कि स्वयं आपके शरीर में भी पचतत्त्वों का एक Proportion है जिसके कारण आपकी स्थिति है यानी आप भीमिष्ठ है । जिस दिन मैं अनुपात भीम ही जाता है उसी दिन मृत्यु हो जाती है । उर्दू के महार्क

बकबस्त ने इसी सत्य को इस प्रकार कहा है—

“जिम्बपी क्या है अनासिर में चहुरे तपतीब,  
सोत क्या है—इन्हीं अजडां का परीयां होता।”

वहाँ सम्बुद्धन है अनुपात है वहाँ क्रम (Order) है। यू कहें तो अधिक उपयुक्त होया कि क्रम ही सन्तुलन है—Order is proportion। सृष्टि में भी एक क्रम है। प्रत्येक गतिशील तन्त्र में एक क्रम होता है। अल्फ्री हुई रेलगाड़ी में भी एक क्रम होती है। सम्पूर्ण विश्व ही एक क्रम है। हबारी-लाबा बपे हो मये मूरब घडा से सुबह ही निकला और अन्तमा रात को ही उदय होता है। न तो किसी ने (केवल कवि को छोड़कर) रात में मूरब बेला और न किसी न दिन में चाँद। शताब्दियों की माँग का सिन्दूर झर गया पर सृष्टि के इस क्रम में रंभमान भी अन्तर नहीं आया। और इस सृष्टि के सम्पूर्ण विश्व की ओर भी बरा देखिये। इस संसार के पालन का भार उठे मिला है पर वह आदिकाल से क्रम के पक्ष पर आप को सीमा बनाये हुए दीरसागर में धमक कर रहा है। आश्चर्य की बात है कि वह राधा जिस पर इतन विद्यालय सम्भार्य के पालन और सरक्षण का भार है इस प्रकार निरन्तर होकर गटा है। पर इसमें अचरब की बात कुछ भी नहीं। जिसके राज्य में सब कुछ अपन आप क्रम से संभालित होता खता है उस राज्य के राजा को दीड़ रूप की क्या आवश्यकता—वह तो ऐसे निरिच्छ होकर सोता है जैसे दीरसागर में बिष्णु। तो इस सृष्टि में एक क्रम है सम्बुद्धन है जिसका नाम है, सौन्दर्य और आ सम्पूर्ण विश्व की स्थिति का कारण है।

इसरी तरह सञ्चय। सुन्दर वस्तु की ओर आप देखते हैं तो वह आपको अपनी आर आकर्षित करती है। आकर्षण बल का गुण है यानी जहाँ सौन्दर्य है वहाँ बलना है आकर्षण है। तो सौन्दर्य एक बलन आकर्षण-शक्ति है। वैज्ञानिक दृष्टि से देखिये तो पता चलता कि सम्पूर्ण विश्व की स्थिति का कारण भी आकर्षण है। य धरती आकाश मूरब चाँद सितारे प्रह उपग्रह सब एक आकर्षण-बल में बँधे हुए रहे हैं—

“एक ही कोल पर घूमती है बरा  
एक ही ओर से बस बैया है गवन  
एक ही सात में जिम्बपी झर है,  
एक ही तार से जुग गया है कञ्ज।”

आकर्षण में जिस दिन बिचपंग होता है, उसी दिन प्रत्येक हो जाती है।

लिए मैं कहता हूँ कि काव्य की व्याख्या नहीं की जा सकती ।

पर हाँ जिस प्रकार कुसुम के सुवास की व्याख्या न होकर उसकी पेंसुरियों के रूप रस (बाह्यावरण) के विषय में कुछ बताया जा सकता है, उसी प्रकार काव्य के मात्र की मीमांसा न सम्भव होकर भी उसके साधनों और उसके कारणों के विषय में कुछ संकेत दिये जा सकते हैं ।

जीवन के सत्ताइस पृष्ठ पढ़ने के बाद मेरी अनुभूति अब तक केवल तीन सत्य प्राप्त कर चुकी है—सौन्दर्य प्रेम और मृत्यु । इनका अर्थ मेरी कविता में क्रमशः चिन्ति (सौन्दर्य) गति (प्रेम) और पति (मृत्यु) है । अपने पाठकों और आकाशिका की सुविधा के लिये मैं प्रत्येक की अक्षय-अक्षय व्याख्या करता—

सौन्दर्य—

सौन्दर्य का अर्थ मेरी दृष्टि में संतुलन (Harmony), क्रम (Order) आकर्षण (Gravitation or Attraction) स्थिति-काव्य (Pace of existence) और सब मिलाकर चिन्ति संकित है । सत्ताइसवर्ष मान लीजिये आपके सम्मुख चार व्यक्ति कटे हैं । आप उन चार व्यक्तियों में से केवल एक को सुन्दर बतलाते हैं और शेष तीनों को नहीं । अब प्रश्न उठता है कि आपके पास वह चीज-या पैमाना है जिससे नाप-जोख कर आपने चार व्यक्तियों में से केवल एक को ही सुन्दर ठहुराया । आप कहते हैं—पहले व्यक्ति की न तो मुलाक़ाति ही सुन्दर है और न उसका शरीर ही सुधील है, फिर उसे सुन्दर कैसे कह सकते हैं ? दूसरे व्यक्ति को आप यह कह कर असुन्दर ठहुरा बेटे हैं कि उसकी मुलाक़ाति (नाक कान आँख थोड़ा-बढ़ि) तो सुन्दर है पर उसका शरीर सुधील नहीं । तीसरे व्यक्ति के लिये आप कहते हैं—उसका शरीर तो सुधील है पर उसकी मुलाक़ाति असुन्दर है—इसलिए उसे भी सुन्दर नहीं कहा जा सकता । चौथा व्यक्ति जिसे आपने सुन्दर बतलाया है आप कहते हैं कि नख से छिन्न तक उसका प्रत्येक शरीर-अवयव निर्दोष है । उसके सम्पूर्ण अंगों में एक समुचित अनुपात (Proportion) है । न उसकी नाक मोटी है न आँख छोटी । न उसके हाव मोट है और न पाँच पलके बर्बात् उसका सम्पूर्ण शरीर संतुलित है और इसीलिए वह सुन्दर है । इसी दृष्टि से यदि आप अपनी ओर भी दृष्टिपात करें तो आपको पता चलेगा कि स्वयं आपके शरीर में भी पञ्चतत्वों का एक Proportion है, जिसके कारण आपकी स्थिति है यानी आप जीवित हैं । जिस दिन वह अनुपात क्षीण हो जाता है, उसी दिन मृत्यु हो जाती है । उर्बु के महाकवि

कमबस्त ने इसी सत्य को इस प्रकार कहा है—

“त्रिज्यपी क्या है अनासिर में बहुरे सरतीय  
मोत क्या है—इन्हीं मजबूती का परीक्षा होना ।”

जहाँ सम्बन्ध है अनुपात है वहाँ क्रम (Order) है । यू नहूँ तो अधिक उपयुक्त होमा कि क्रम ही सम्बन्ध है—Order is proportion । सृष्टि में भी एक क्रम है । प्रत्येक गतिशील तन्त्र में एक क्रम होता है । भगती हुई रेखाओं में भी एक क्रम होती है । सम्पूर्ण विश्व ही एक क्रम है । हजारों-लाखों वर्ष हो गये मूलक सदा से सुबह ही निकलना और अस्तमा रात को ही उठना होता है । न तो किसी ने (केवल नदि को छोड़कर) रात में मूत्र देना और न किसी ने दिन में चाँद । घटाशियों की माँग का सिन्दूर सर गया पर सृष्टि के इस क्रम में रंजमान भी अस्त नहीं आया । और इस सृष्टि के मज्जाद बिण की ओर भी जरा दखिये । इस समार क पावन का भार उठे मिला है पर वह व्याधिकार से कमल के पत्र पर शेष को संभाला बनाये हुए धीरसागर में शयन कर रहा है । आश्चर्य की बात है कि वह राजा जिस पर इतना विशाल माश्राय्य के पालन और सरक्षण का भार है इस प्रकार निदरान्त होकर लेता है । पर इसमें अचर्य की बात कुछ भी नहीं । जिसके राज्य में सब कुछ जगल जाप क्रम से संभालित होता रहता है उस राज्य के राजा का वीर्य पूरा का क्या आश्चर्यकता— बह तो ऐसे निदरान्त होकर साठा है जैसे धीरसागर में बिण्डु । तो इस सृष्टि में एक क्रम है सातुक्त है जिसका नाम है सौन्दर्य और वा सम्पूर्ण विश्व की स्थिति का कारण है ।

दूसरी तरह सौन्दर्य । सुन्दर बन्धु को ओर जाप बेगते हैं तो वह मापनी मपनी ओर आकर्षित करती है । आकर्षण बल का गुण है यानी जहाँ सौन्दर्य है वहाँ अतना है आकर्षण है । तो सौन्दर्य एक बल आकर्षण-शक्ति है । वैज्ञानिक दृष्टि से देखिये तो पता चलेमा कि सम्पूर्ण विश्व की स्थिति का कारण भी आकर्षण है । य परती आकाश मूलक चाँद मितारे पर उाहू सब एक आकर्षण-बल में जैसे घूम रहे हैं—

“एक ही कोत पर घूमनी है घरा  
एक ही ओर से बस बँपा है पाग,  
एक ही सीत में त्रिज्यपी डर है  
एक ही तार से बुन गया है कश्म ।”

आकर्षण में जिस दिन विरपय भागा है उती दिन प्रकय हो जाती है ।



बर्नात् आकषण (सौम्यं) ही स्थिति है ।

हैं तो मैं सौम्य्य को सृष्टि की स्थिति का कारण बिल शक्ति मानता हूँ । जिस दिन सौम्य्य इस मिट्टी को स्पर्श करता है उसी दिन चतना (प्राण अथवा ताप) का जन्म होता है । यह एक विज्ञान सम्मत सत्य है कि दो वस्तुओं के स्पर्श या सपर्श से ताप (Heat) की उत्पत्ति होती है । मेरे बीठों में कई स्थानों पर इसकी प्रतिष्ठाति निम्नी जैसे इन पंक्तियों में—

(१) "एक ऐसी होती हैत कड़ी बूल यह  
बास इगल की मुस्करान लमी  
तान ऐसी किली ने कहीं छड़ की  
भाँच रोती हुई धीत जाने लमी ।"

अथवा

(२) "एक ताजुक किरन छू गई इस तरह  
कुच-बकुच प्राण का बीप बतने लगा  
एक आवाज भाई किली ओर से  
हर मुसाफिर बिना बीब बतने लगा ।"

अथवा

(३) कहीं बीप है जो किली उर्ध्वी को  
किरन उर्ध्विओं को झूमे बिना जना हो ।

अथवा

(४) परत तुम्हारा प्राण बन गया,  
दरद तुम्हारा स्वास बन गया ।

ठीसरे उद्धारण में उर्ध्वी सौम्य्य का प्रतीक है । बीपक के रूपक से चेतना के जन्म की ओर लक्ष्य है । जोबे उद्धारण में सौम्य्य और प्रेम से किस प्रकार प्राण (ताप चेतना) और स्वास (बलि) का जन्म हुआ—इसकी कहानी है । सौम्य्य और प्रेम द्वारा सृष्टि के उद्गतन और विकास का रूपक यह गीत है । प्रेम—

किन्तु कबस स्थिति या चिति ही जीवन नहीं है वहाँ चिति भी है और जीवन की गति देने वाली शक्ति का ही नाम है प्रेम । ठाणिक दृष्टि से प्रेम का अर्थ है—एक ही दो होना दो से बनेक होना और बनेक से फिर एक हो जाता । सृष्टि के विकास का भी वही रहस्य है—'एकोहम् बहुस्मान्' । वहाँ

मईठ है, वहाँ प्रेम नहीं हो सकता। प्रेम के लिए ईठ की आवश्यकता है। ईठ बनेकाल को जगम देता है किन्तु प्रेम इस ईठ (व्यक्ति) और बनेकाल (समष्टि) से होता हुआ मईठ की ओर ही जाता है। सम्पूर्ण सृष्टि एक तन्त्र है वही है और उसी में समा जायेगी।

व्यावहारिक दृष्टि से प्रेम का अर्थ है किसी को प्राप्त करने की और प्राप्त करके स्वयं वही बन जाने की इच्छा-साक्षात् या भावना। प्राप्त करने का अर्थ है किसी स्वप्न को किसी व्यास को या किसी आदर्श को साकार करने की कामना। और कामना ही गति है।

जब तक भीखित भास एक भी  
तभी तन्त्र सातों में भी गति" (बादर बरस गयो)

अथवा

हंस रहा उसने चलती चाह है  
आवनी चलता नहीं संसार में

जब हम अपनी दृष्टि भीतर से बाहर की ओर करते हैं तब हम प्रेम (कामना-इच्छा) करते हैं और तभी हम किसी आदर्श को जगम देते हैं। जो वस्तु भीतर है उसके लिए हमें भाग-बीड़ नहीं करनी पड़ती किन्तु जो वस्तु बाहर है उसके लिए प्रयत्न अनिवार्य है। यद्यपि प्रेम भी एक भावना का ही नाम है जो भीतर है किन्तु उसका आकार बाहर होता है। वह किसी व्यक्ति वस्तु या आदर्श का रूप धारण कर ही साकार हो सकता है—वह निराकार साकार है। यदि तनिक सूक्ष्म दृष्टि से देखिए तो पता चलेगा कि प्रेम के लिए हम स्वयं (एक) का ही भावना के माध्यम से एक और रूप रचते हैं। जो हमारा दृष्ट है वस्तुतः वह अपरं नहीं बल्कि हमारा स्वयं ही भीतर से बाहर आकर 'पर' बन गया है यानी हम स्वयं भीतर से बाहर आकर स्वयं को प्रेम करते हैं 'निराकार'। जब तुम्हें दिया आकार स्वयं साकार हो गया।" इसी लिए मैं कहता हूँ कि प्रेम भावना का सूक्ष्म बाह्य प्रयत्न है—व्यक्ति और समष्टि से होकर दृष्ट एक जाने का एक मार्ग। तो प्रेम एक प्रयत्न है और प्रयत्न ही गति है। जीवन में गति है तो वह प्रेम है।

यहाँ एक प्रश्न पूछा जा सकता है—क्या प्रेम जीवन के लिए अनिवार्य है? मेरा उत्तर है 'हाँ किन्तु क्यों? इसलिए कि वह हृदय की अनिवार्य भूय है। पर इस भूय को समझने के लिए हमें सृष्टि के जगम तक दृष्टि फैलानी होगी। सारे परंपरियों ने स्वीकार किया है कि हम विश्व का उद्भव एक तन्त्र से हुआ

है। लेकिन यह किस प्रकार संभव है। प्रकृति और पुरुष के संयोग का नाम सृष्टि है। वो के बिना क्या कहाँ? तो मानना पड़ता है कि वह आदि-तत्त्व जिससे इस विश्व की रचना हुई है अबतक ही एक होकर दो था। हमारे यहाँ उसे अर्ध-नारीश्वर कहा गया है। भाषा बर्ण स्त्री का और भाषा बर्ण पुरुष का—एक साथ स्त्री-पुरुष—है। (अभी पपीते की भी कुछ ऐसी मस्से मिली है जो एक साथ नर-मादा होती है) उस अर्धनारीश्वर (एक तत्व) ने प्रेम के लिए या कहिये सृष्टि प्रसारण के लिए, कैलि के लिए, श्रीका के लिए अपने को दो में विभाजित किया (अर्थात् ने दूत को जन्म दिया) दो के बाद चार चार के बाद आठ और फिर इस तरह सृष्टि बन गई। किन्तु आदि-तत्त्व के विभाजन (division) से संसार में एक बहुत बड़ी टूटपड़ी हो गई कि प्रत्येक चतन तत्व एक अपूर्ण आत्मा—विभाजित आत्मा हो गया। फलस्वरूप उसके हृदय में व्यास है। मुक्त है, अपने सग आत्मा के साथी (Soul-mate) के लिए जो सृष्टि के आदिकाल से उससे अलग है और जिसको खोजने के लिए, जिसकी प्राप्ति करने के लिए बार-बार उसे मिट्टी के ये कपड़े बदलने पड़ते हैं—

“नाम के इस नगर में तुम्हीं एक मे  
 खोजता मैं जिसे आ गया था यहाँ  
 तुम न होते अगर तो मुझे क्या पता  
 तन भटकता कहाँ मन भटकता कहाँ  
 वह तुम्हीं हो कि जिसके लिए आज तक  
 मैं टिक्तता रहा अन्ध में बाल में  
 यह तुम्हीं हो कि जिसके जिना शक बना  
 मैं भटकता रहा रोज अज्ञान में”

वस आत्मा के साथी के लिए जो प्रत्येक चतन तत्व में व्यास और चाह है, उसी का नाम प्रेम है और यह व्यास जब तक सुप्त नहीं बनेगी जब तक उस मन के भीत से आरम्भ-सम्बन्ध स्थापित नहीं होना। यह आवाबमन का चक्र भी जब तक चलता रहेगा जब तक यह नहीं मिलेगा। जिस दिन वह मिथ आयोग उसी दिन मुक्ति हो जाएगी। मैं ही क्या मैं जिसके दृष्टि शक्त्या हूँ बैबता हूँ—

“दीप को अपना बनाने को पसंग चल रहा है  
 बूब बनने की समुन्दर की दिनालय मन रहा है”

प्यार पाने को घर का मीठ है व्याकुल मन में  
 जूमने को मृत्यु निशि दिन स्वास पत्नी चल रहा है।

(बाहर बरस पयो)

तो हम बार-बार अपने बिछड़ हुए साथी की खोज करते आते हैं पर-  
 बार-बार हम भटक जाते हैं—या तो हम अपना लक्ष्य-पूज्य-अपन (मंदिर  
 मस्जिद) को बना करते हैं या प्रकृति को या योग-समाधि को। हम मनुष्य हैं  
 हमारी आत्मा का साथी तो कहीं मनुष्यों में ही मिलेगा। किन्तु हम वहाँ न  
 खोजकर इधर-उधर भटकते फिरते हैं। फिर मल्लि कंठे हो? मझे यी  
 सरमाया गया बा—

“खोजने जब जला में तुम्हें बिरब में  
 मन्थिरीं न बहुत कुछ भुभावा दिया  
 खेर पर यह हुई जल की बौड़ में  
 क्याल बने न कुछ पत्थरों का किया  
 रक्तों के लुका सींग खुरे करक  
 बाहू जाला कली ने घसे में मजस  
 एक तस्वीर तेरी तिये किन्तु में  
 लाक दालन बचाकर गया ही निकल।”

पर इस बार मेरे पास उसकी तस्वीर भी इसलिए में भुभा नहीं। पर  
 अभी पल्लभ्य मिला नहीं है—अपर यू नहीं कि मिलकर छूट गया है तो अधिक  
 घड़ी होया। जीवन का यह बहुत बड़ा अभिघाप और साथ-साथ बरवान भी  
 है कि जो हमारी मंजिल होती है जब वह समीप आती है तब या तो हम  
 उसको पीछ छोड़कर आये बढ़ जाते हैं या वह स्वयं धीरे धीरे बढ़ जाती है—

पागल हो तलाश में जिसकी  
 हम गुर बन जाते रज नय की  
 किन्तु प्राप्ति की व्याकुलता में  
 कभी कभी हूँ मंजिल से भी आगे बढ़ जाते।

अथवा

में समझता था कि मंजिल पर पहुँच आना-जाना यह पल्लभ ही आसपास  
 पर हजारों बार ही ऐसा हुआ बास आकर दूर जाना पड़ गया।

इसी प्रकार जब हम भावना (प्रम) के माध्यम से अपने हम आत्मा के  
 साथी के निगट पहुँचने हैं तो वह पीछ गिरावटा है और गिरावने-बिगड़ते

विराटमा में मिल जाता है । अन्त में हम भी उसकी ओर दृष्टे-दृष्टे  
विराटमा तक पहुँच जाते हैं—

“मैं तो तेरे पुत्र को जन्मा था तेरे द्वार  
तू ही मिला न मुझे वही मिल गया जड़ा संतार ।”

और फिर मनुष्य स्वयं ही कहने लगता है—

दूर कितने भी रहो तुम बाह्य प्रतिफल,  
वर्षोंकि मेरी छावना ने पल विमिव बल  
कर दिए कैशित सब को ताप बल से  
विश्व में तुम और तुम में विश्व भर का प्यार ।  
दूर जगह ही अब तुम्हारा द्वार ।

और जिस दिन मनुष्य अपनी आत्मा का प्रेम (भावना) के द्वार विराटमा  
से तादात्म्य स्थापित कर लेता है उसी दिन उसकी मुक्ति हो जाती है ।  
विराटमा से अपनी आत्मा का तादात्म्य ही मुक्ति है और यह सदेह ही  
प्राप्त हो जाती है आभावमग्न के बल को बहुत दूर छोड़कर ।

एक वाक्य इस सम्बन्ध में और कहें दूँ तो अनुपमक न होया । जो व्यक्ति  
‘प्रेम’ को नहीं जानता वह केवल ‘मैं’ (अहं) को ही जानता है । और केवल  
‘मैं’ को जानने का अर्थ है छोपे सृष्टि के रामात्मक सम्बन्ध से हीन हो जाना ।  
किन्तु जो व्यक्ति प्रेम करता है वह ‘मैं’ (अहं) को समूल नष्ट तो नहीं करता  
उसका ‘तुम’ से सम्बन्ध स्थापित कर उसका पर्यत्पान करता है । वह ‘मैं’  
कहता तो है पर ‘मैं’ कहने से पूर्व वह कहता है ‘तुम’ । यथा—

“यव तुम्हारी भी मैं तो बस बनकर तुमन पुरा जन्मा था,  
क्य तुम्हारा या मैंने तो केवल वर्षप विचलामा था ।

और इस प्रकार वह व्यक्ति की सकुचित सीमा से निकलकर समष्टि की  
ओर जाता है—अपने व्यक्तित्व का सत्पान कर देवत्व की ओर जाता है ।  
इसीलिए मैं प्रेम को जीवन की बलि के साध-साध एक बहुत बड़ी शक्ति—  
एक बल से भी अधिक प्रबल शक्ति मानता हूँ और जो उसका विरोध करता  
है उससे कहता हूँ—

प्रेम दिन मनुष्य दुष्चरित्र है

अथवा

प्रेम जो न तो मनुष्य जन्मूँ है ।

मृत्यु—

प्रम जीवन की प्रति है । अपनी आत्मा के साथी के लिए जो जोख हम विभिन्न रूपों में कर रहे हैं उसका नाम जीवन है । पर जो जोख करता है वह बफता भी है । संसार की प्रत्येक वस्तु शक्ति और प्रति को जीवित रखने के लिए विधायक होती है । यह चेतना जो हजारों बरसों से अपने साथी के लिए मटकती फिर रही है इसको भी बफाना माटी है । बफाना जान पर यह भी विधायक चाहती है । इसको अपनी सेवा पर जो धन भर विधायक होती है—उसी का नाम है मृत्यु—जिसे मैं प्रति कहता हूँ ।

“जीवन क्या माटी के तन में केवल प्रति भर देना

और मृत्यु क्या उस प्रति को ही धन भर प्रति कर देना।” (बादर बरस बबी)

अथवा

“है अत्यन्तक ती विराम भी  
बहि पद कम्पा और कठिन हो,  
पर केवल जतना ही जितने  
से पय-यम की दूर पकन हो ।”

इन तीन तत्त्वों के अतिरिक्त एक चौथा तत्त्व भी है—विशका नाम है रोटी (पेट की भूख) । हृदय की भूख-व्यास जिस प्रकार जीवन-स्थिति के लिये आवश्यक है उसी प्रकार पेट की भूख भी शरीर स्थिति के लिए अनिवार्य है । और जिस प्रकार हृदय (प्रम) के माध्यम से मनुष्य अन्त में विराम की एकठा तक पहुँचता है उसी प्रकार रोटी के माध्यम से भी हम अन्त में मानव-एकता तक ही पहुँचते हैं । दोनों का स्वरूप एक है इसलिए दोनों को मैं एक प्रेम के अस्तंगत ही के लिये है ।

जीवन के प्रति जो मेरी दृष्टि है वह मैं यहाँ आपके सामने स्पष्ट की है । यह बल्य है या सही प्रतिभासी या प्रगतिवादी, यह तो निर्णय आर करेग । मैं तो केवल साम्य बर्ष के साथ इतना ही कहता हूँ कि इन दृष्टिकोण से मुझे अपने जीवन में काफी बल मिला है ।

‘इन्द्रेणी

४७ मेरिग रोड

कलीकट

—गीतिका



पत्थरों के दर  
की  
राजकुमारी को







## सूक्त

१	क्या करेगा प्यार वह	१
२	पीछ	२
३	कोई नहीं पताया मेरा घर	४
४	प्रेम पक्ष ही न सूना	६
५	प्रेम को न जान हो	६
६	तुम इरो न प्यार करो ✓	१०
७	दुश्मन को अपना हृदय बना देकर देखो !	१२
८	बीप नहीं बीप का	१३
९	कलाओ लिए पर	१६
१०	मूल पुकारी है वह जो कहता	१७
११	जोड़ने तुमको गया	१९
१२	जब न तुम ही मिसे	२०
१३	मुझे न करना नाब तुम्हारा	२३
१४	जगत् धर्म ब्रह्म मिथ्या	२५
१५	जब सूना सूना	२६
१६	तुम्हारे बिना भारती	३२
१७	एक पाँच जल रहा	३४
१८	कहते कहते पके	३६
१९	इन तरह यह हुआ	३९
२०	युही यही	४१
२१	आरमी है मीठ	४२
२२	मह प्रबाह है	४७
२३	आरमी को प्यार हो ✓	४९
२४	इस पार नहीं उस पार नहीं	५३
२५	कल तुम हो	५५
२६	एक बार यदि करने मंदिर	५६
२७	भुगी परती बर	५७



## क्रम

- १ क्या करेगा प्यार वह
- २ पीठ
- ३ कोई नहीं परामा मेरा पर
- ४ प्रेम पक हो न सूना
- ५ प्रेम को न बात बो
- ६ तुम डरो न प्यार करो ✓
- ७ दुस्मन को अपना हृदय धरा देकर बेजो !
- ८ बीप नहीं बीप का
- ९ अस्माओ दिए पर
- १० भूत पुमाठी है वह जो कहवा
- ११ लोजने तुमको गया
- १२ जब न तुम ही मिसे
- १३ मुझे न करमा याद तुम्हारा
- १४ जयप् सत्यं ब्रह्म मिथ्या
- १५ जब सूना भूना
- १६ तुम्हारे बिना भाखी
- १७ एक पाँव जम रहा
- १८ कहते करते बके
- १९ हम तरह वह हुआ
- २० यू ही यू ही
- २१ आदमी है पीठ
- २२ यह प्रयाह है
- २३ मावनी को प्यार बो ✓
- २४ इस पार नहीं उस पार नहीं
- २५ कोन तुम हो
- २६ एक बार यदि अपने मंदिर
- २७ भूगी परती अब

१  
२  
३  
४  
५  
६  
७  
८  
९  
१०  
११  
१२  
१३  
१४  
१५  
१६  
१७  
१८  
१९  
२०  
२१  
२२  
२३  
२४  
२५  
२६  
२७

२८. सृष्टि हो जाये	१३
२९. ३ जनवरी—एक आरेख	१५
३. मन वाबाब नहीं है	१७
३१. क्या है मह	७
३२. परस तुम्हारा प्राण	७३
३३. निराकार ! जब तुम्हें	७५
३४. मनष्य की एक्स्ट्रेम बिजय पर	७७
३५. फूड की सारी कहानी	८१
३६. तसेनी	८३
३७. जब मुड नहीं होया	९
३८. बीबन-जस !	१४
३९. फूलों का विद्रोह ~	१७
४. सम्मता कहाँ का मई ?	१८
४१. यह हृदय है	१९
४२. सत्य का निर्माण करती	१४
४३. प्राण की बड़कन	१५
४४. दिव्य मुमन (Rose of God) का रूपान्तर	१०६
४५. वृक्ष बीर आत्मा (Tree) कविता का अनुबाद	
४६. जीवन बीर मरण (Life and Death) का अनुबाद	१०७
४७. निमन्त्रण (Invitation) का हिन्दी रूपान्तर	१८
४८. विजय गीत (Triumph Song of Trichanku)	१९
४९. महाप्रवसी	१११
५. स्वप्न-राती (Dream-Boat) का हिन्दी रूपान्तर	११२

क्या करेगा प्यार वह...

१

क्या करेगा प्यार वह भगवान को ?  
क्या करेगा प्यार वह ईमान को ?  
जन्म लेकर गोद में इन्सान को  
प्यार कर पाया न जो इन्सान को ।

## गीत

२

तुम झूम झूम गाओ रोते नयन हुआओ  
मैं हर नगर डपर के काँटे बुहार दूँगा !

भटकी हुई पवन है  
सहमी हुई किरन है  
न पता कहीं सुबह का  
हर ओर तम पहलू है  
तुम डार डार जाओ परदे उषार भाओ  
मैं सूर्य चाँद छारे झू पर बतार दूँगा ।  
तुम झूम झूम गाओ ।

गीमा हरेक भाँसल  
दूटी हरेक पायस  
ध्याकुल हरेक पितबन  
बायस हरेक काजस  
तुम सेज सेज जाओ, सपने नये सजाओ,  
मैं हर नमी भनी के पी नो पुकार दूँगा ।  
तुम झूम झूम गाओ ।

बिघना हरक डाली  
हर एक मीठ खाली  
गाती न कही कोयल  
दिल्लता न कहीं मानी

तुम बाग बाग जाओ हर फूल को जगाओ  
मैं फूल को उठाकर सबको बहार दूंगा ।  
तुम भूम भूम गाओ ।

मिट्टी उमल रही है  
घरती समल रही है  
इम्सान जग रहा है  
दुनियाँ बदल रही है

तुम सत सत जाओ वो बीज डाल भाषों  
इतिहास से हृद् में घमती सुभार दूंगा ।  
तुम भूम भूम गाओ ।





कोई नहीं पराया

३

कोई नहीं पराया मेरा घर सारा ससार है।

मैं न बेघा हूँ देश-काम की जग लगी जजीर में  
मैं न लड़ा हूँ जाति-याति की ऊँची-नीची भीड़ में  
मेरा धर्म न कुछ स्याही-सर्पों का सिर्फ मुसाम है  
मैं बस कहता हूँ कि प्यार है तो घट-घट मे राम है  
मुझसे तुम न कहो मंदिर-मस्जिद पर मैं सर टेक दूँ  
मेरा तो आराध्य भावमी दबासय हर द्वार है।  
कोई नहीं पराया मेरा घर सारा ससार है ॥

कहीं रहे कैसे भी मुझ को प्यारा यह इन्सान है  
मुझको अपनी मानवता पर बहुत-बहुत प्रतिमान है  
धरे नहीं देवत्व मुझे तो भाता है मनुजत्व ही,  
धीर छोड़कर प्यार नहीं स्वीकार सकल प्रभरत्व भी  
मुझे सुनाओ तुम न स्वर्ग-सुख की सुमादुर कहानियाँ  
मेरी घरती सो-सो स्वर्गों से ब्यादा सुकुमार है।  
कोई नहीं पराया मेरा घर सारा ससार है ॥

मुझे मिली है व्यास विपमता का विप पीन क लिए,  
 मैं जन्मा हूँ नहीं स्वय-हित अग-हित जीने के लिए  
 मुझे दी गई प्राण कि इस तम मे मैं प्राण संग सब  
 नील मिले इसलिये कि प्रायस जग की पीडा गा सब  
 मरे बदलि मीतो को मत पहनायो हथकड़ी

मेरा बर्न नहीं मेरा है सबका हाहाकार है ।

कोई नहीं पराया मेरा पर सारा ससार है ॥

मैं सिलभाता हूँ कि जियो मो जीने दो ससार को  
 बितना अपादा याँट सको तुम बाँटो अपने प्यार को  
 हँसो इस तरह हँसे तुम्हारे साथ दमित यह धूम भी  
 बसो इस तरह कुशल न जाये पग से कोई धूल भी  
 मुझ न तुम्हारा मुसकेवल जग का भी उसमें भाग है

फूल बाम का पीछ पहने उपवन का शृंगार है ।

कोई नहीं पराया मेरा पर मारा संसार है ॥



प्रेम-पथ हो न सुना

५

प्रेम-पथ हो न सुना कभी इसलिए  
जिस जगह मैं थकूँ उस जगह तुम चलो ।

कदम सी मौन भरती पड़ी पाँव पर  
धीरे धीरे कफ़न सा धिरा धासमाँ  
मौत की राह में मौत की छाँह में  
बस रहा रात-दिन मौसम का कारवाँ

जा रहा है चला जा रहा है बड़ा  
पर नहीं ज्ञात है किस जगह धाम हो ?  
किस जगह पग रूके, किस जगह भग छूटे  
किस जगह धीत हो किस जगह धाम हो

मुस्कराये सदा पर भरा इसलिए  
जिस जगह मैं मरूँ उस जगह तुम लिसो ।

प्रेम-पथ हो न सुना कभी इसलिए  
जिस जगह मैं थकूँ उस जगह तुम चलो ।

एक दिन कास-रुम की किसी रात ने  
 दे दिया था मुझे प्राण का यह दिया  
 पार पर यह जसा पार पर यह जसा  
 वार घपना हिंसा विश्व का तम पिया

पर चुका जा रहा साँस का स्नेह भव  
 रोशनी का पथिक बस सकेगा नहीं  
 श्रावियों के मगर में बिना प्यार के  
 दीप यह मोर तक बस सकेगा नहीं

पर जस स्नेह की लौ सदा इसलिये  
 जिस जगह मैं दूम्बू उस जगह तुम बनो ।

प्रेम-वध हो न सूना कभी इसलिये  
 जिस जगह मैं दूम्बू उस जगह तुम बनो ।

रोज ही बाण मे देखता है सुबह,  
 भूम ने फूस कुछ घपसिमे चुन लिये  
 रोज ही चीखता है निदा में गगन—  
 'क्यों नहीं प्राण मेर जसे कुछ दिये ?

इस तरह प्राण ! मैं भी यहाँ रोज ही  
 बस रहा है किसी बूँद की प्यास में  
 जी रहा है भरा पर, मगर लग रहा  
 कुछ क्षिपा कहीं है दूर आकाश मे,

दिय न पाये कहीं प्यार पर इसलिये  
 जिस जगह मैं दिपू उम जगह तुम मिसो ।

प्रेम-वध हो न सूना कभी इसलिये  
 जिस जगह मैं दूम्बू उस जगह तुम बनो ।

प्रेम का पंथ सूना अगर हो गया  
 रह सकगी वसी कौन-सी फिर गली ?  
 यदि बिना प्रेम का ही नहीं पूस तो  
 कौन है जो हसे फिर अमन में बसी ?

प्रेम को ही न जग में मिला मान तो  
 यह भरा यह मुबन सिर्फ अममान है  
 भादमी एक बसती हुई साध है  
 और जीना यहाँ एक प्रपमान है

भादमी प्यार सीजे कभी इसलिए  
 रात दिन मैं बर्नू रात दिन तुम बसो ।

प्रेम-पथ हो न सूना कभी इसलिए  
 जिस अमह मैं बर्नू, उस अगह तुम बसो



प्रेम को न दान दो...

५

प्रेम को न दान दो न दो दया  
प्रम तो सर्वैव ही समूह है ।

प्रम है कि ज्योति-स्नेह एक है  
प्रम है कि प्राण-देह एक है  
प्रम है कि विष्व गह एक है

प्रमहीन गति प्रगति विरुद्ध है ।  
प्रम तो सर्वैव ही समूह है ॥

प्रम है इसीलिए दमित दनुज  
प्रम है इसीलिए विजित दमुज,  
प्रम है इसीलिए धजित ममुज

प्रम के बिना विकास कूट है ।  
प्रम तो सर्वैव ही समूह है ॥

नित्य घत करे कि नित्य सप करे  
नित्य बेद-पाठ नित्य जप करे,  
नित्य गग घार में त्रिरे-तरे

प्रम जो न तो मनुज धमुड है ।  
प्रम तो सर्वैव ही समूह है ॥

दुश्मन को अपना हृदय जरा देकर देखो !

७

यह नफ़रत की वाक्य न बिसराओ साथी ।  
यह युद्धों का पहरीला नारा बन्द करो  
जो प्यार तिबोरी-सेफ़ों में है तड़प रहा  
उसके बन्धन लोभो उसको स्वच्छन्द करो ।

मृत मानवता जिन्दगी माँगती है तुम से  
दो बूँद स्नेह की उसके प्राणों में डालो  
प्रादम का जो यह स्वर्ग हो रहा है मरपट  
जाओ ममता का एक दिया उसमें बालो ।

निर्माण शृणा से नहीं प्यार से होता है  
सुख-शान्ति खड्ग पर नहीं फूल पर पसते हैं  
प्रादमी देह से नहीं नेह से पीता है  
बन्धों से नहीं बोम से बन्ध पिपसते हैं ।

तुम डरो न प्रागे प्राओ निज मुझ फैलाओ  
है प्यार जहाँ, तसबार वहाँ मुझ जाती है  
पतवार प्रेम की छू आये जिस किस्ती को  
मैम्बार, पाए उसको खुद पहुँचा जाती है ।

जिसके धधरों पर गीत प्रेम का जीवित है  
 वह हँसकर सूफानों को गोद सिंसाता है  
 जिसके सीने में दर्द छिपा है दुनियाँ का  
 संसारों से बढ़कर वह हाथ सिंसाता है ।

कितना ही क्यों न बड़ा हो घाव हृदय में पर  
 सब कहता है यह प्यार उसे भर सकता है  
 कैसा ही बापी—दुश्मन हो भादमी मगर  
 बस एक धनु का तार कैंद कर सकता है ।

कितना ही ऊबड़-खाबड़ हो रास्ता किन्तु  
 यह प्यार फूल-सा तुम्हें उठा से जायेगा  
 कैसी ही भीषण घोंघियारी हो धुंधा-धुन्ध  
 पर एक स्नेह का दीप मुबह से प्राएगा ।

मैं इसीलिए धक्कर लोगों से कहता हूँ  
 जिस अगह बँटि मजूरत का प्यार मुटाओ तुम  
 जो चोट करे तुम पर उसने धूम तो हाथ  
 जो गाली दे उसको धाशीप पिन्हाओ तुम ।

तुम धान्ति नहीं ता पाप मुटों के द्वारा  
 धव फैंक जरा ठमवार प्यार लेकर देखो  
 सब मानो निरधय विजय तुम्हारी ही होगी  
 दुश्मन को धपना हृदय जरा दगर देखो ।





## जसाओ दिये पर



जसाओ दिये पर रहे ध्यान इतना  
घँघेरा घरा पर कहीं रह न जाये ।

नई ज्योति के घर नये पक्ष मिममिष  
उड़े मरुथ मिट्टी गगन-स्वर्ग छू से  
सगे रोगनी की झड़ी मूम ऐसी  
निशा की गली में तिमिर राह भूसे  
सुसे मुक्ति का वह किरन-द्वार जगमग  
उपा जा न पाये निशा धा न पाये ।

जसाओ दिये पर रहे ध्यान इतना  
घँघेरा घरा पर कहीं रह न जाये ।

मूजन है झपूरा धगर बिस्व भर में  
कहीं भी किसी द्वार पर है उदासी  
मनुजता नहीं पूर्ण तब तक बनेगी  
कि जब तक लहू के सिए भूमि प्यासी  
पलेगा मदा नाघ का खेस यूँ ही  
भसे ही दिवासी यहाँ रोज धाये ।

जसाओ दिये पर रहे ध्यान इतना  
घँघेरा घरा पर कहीं रह न जाये ।

मगर दीप को दीप्ति से सिर्फ जग में  
 नहीं मिट सका है धरा का धँघेरा  
 उठर क्यों न धार्ये नसत सब गगन क  
 नहीं कर सकेंगे हृदय में उजरा  
 कटेगी तभी यह धँघेरी पिरी जब  
 स्वयं पर मनुष्य दीप का रूप धार्ये ।

अलापो दिये पर रहे ध्यान इतना  
 धँघेरा धरा पर दुँकहीं रह न आये ।



मूस पुजारी है वह जो कहता

१०

मूस पुजारी है वह जो कहता है मन्दिर ईस्वर का घर ,  
मुहसा भी वह बहक गया जो कहता वह मस्जिद के अन्दर ,  
मन्दिर मस्जिद में ही उमका ईस्वर धीरे लुदा होता तो  
मन्दिर में बन सकती मस्जिद, मस्जिद में बन सकता मन्दिर ।

सोचने तुमको गया

११

सोचने तुमको गया मठ में विजय परमान भग,  
पत्थरों पर झुन न पाया पर सरस गिम्-ध्यान भरा  
जन-अनादन की शरण रख किन्तु जब गिर पर अड़ार्द्ध  
मिस गया मुनको सहज उस भूम में भगवान मेरा ।

जब न तुम ही मिले

१२

जब न तुम ही मिले राह पर तो मुझे  
स्वर्ग भी गर बरा पर मिले—व्यर्थ है।

दीप को रात भर जम सुबह मिस गई  
बिर कुमारी उषा की किरन-पामकी  
सूर्य ने बस दिवस भर अमित-मन्य पर  
रात, लट धूमसी चाँद के गास की,  
बिन्दगी में सभी को सदा मिस गया  
प्राण का मोत धौं सारपी राह का  
एक मैं ही अकेला जिसे आज तक  
मिल न पाया सहारा किसी बाँह का  
बेसहारे हुई अब कि अब बिन्दगी  
साय ससार सारा बसे—व्यर्थ है।

जब न तुम ही मिले राह पर तो मुझे  
स्वर्ग भी गर बरा पर मिले—व्यर्थ है।

एक ही कील पर घूमती है धरा,  
 एक ही खोर से बस बँधा है गगन  
 एक ही साँस में चिन्दगी कैद है  
 एक ही छार से बुन गया है कफन  
 इस तरह हर किसी के नयन में यहाँ  
 एक ऐसी बसी शकल सामोश है  
 प्यार सत्कार भर का मिसे क्यों न पर  
 भादमी को न उसके बिना होच है  
 होश ही धाज घपना नहीं जब मुझे  
 फूल बन उर्वशी भी जिसे—व्यर्थ है !

जब न तुम ही मिसे राह पर तो मुझे  
 स्वर्ग भी गर घरा पर मिसे—व्यर्थ है ॥

नाश क इस मगर में तुम्हीं एक थे  
 खोजता मैं जिसे धा 'गया था यहाँ,  
 तुम न होशे मगर तो मुझे क्या पता  
 तन भटकता कहाँ, मन भटकता कहाँ  
 वह तुम्हीं हो कि जिसके लिए धाज तक  
 मैं खिसकता रहा शब्द में, गान में  
 वह तुम्हीं हो कि जिसके बिना धाव बना  
 मैं भटकता रहा रोज रामनाम में  
 पर तुम्हीं धय न मेरी पियो व्यास तो  
 घाठ पर भी हिनालय गने—व्यर्थ है !

जब न तुम ही मिसे राह पर तो मुझे  
 स्वर्ग भी गर घरा पर मिसे—व्यर्थ है ॥

न से भी बहुत दिन किया प्यार पर  
 ई विस का कमी मुस्कराया नहीं  
 तैद से भी बहुत मन लगाया मगर  
 गण को येन मेरे न घाया कहीं  
 किन्तु उस रोज तुमने पुकारा कि जब  
 मैं पड़ा था धिता पर, मगर गा उठा  
 एक जादू न जाने किया कौन-सा  
 प्राण की गोद में घस्य मुस्का उठा  
 शो' मुझे रोषनी घब तुम्हीं दो न तो—  
 पास घारे मितारे जसें —अर्थ है ।

जब न तुम ही मिले राह पर तो मुझ  
 स्वर्ग भी गर घरा पर मिले—अर्थ है ॥

सोजने जब जसा मैं तुम्हें बिदब में  
 मन्दिरों ने बहुत कुछ मुसाबा दिया  
 लैर पर यह हुई उम्र की दीड़ में  
 ब्यास मति न कुछ पत्थरों का किया  
 पर्वतों न मुका घोस भूमे भरण  
 बाँह डाली बसी न गसे में मजस  
 एक तम्बीर तेरी मिले किन्तु मैं  
 साफ वामन बचावर गया ही निकस  
 धीर फिर भी न यदि तुम मिला तो बहो  
 जन्म किस धर्मे है मृत्यु किस धर्मे है ।

जब न तुम ही मिले राह पर तो मुझे  
 स्वर्ग भी गर घरा पर मिले—अर्थ है ॥

मुझे न करना याद, तुम्हारा

१३

मुझे न करना याद, तुम्हारा प्रांगन गीता हो जायेगा ।  
राज रात को नींद पुरा से जायेगी पपिहों की टोली  
राज प्रात को पीर अगान जायेगी बोमस की वाली  
रोज दुपहरी में तुमसे कुछ कथा कहेंगी मूनी गलियाँ  
रोज मौसु का घोल भिगो जायेंगी कुछ मुरम्झई कलियाँ  
यह सब होगा पर न दुःखा तुम होना मेरी मुख-कैनिनी ।  
तुम सिमकोगी वहाँ यहाँ यह पग बोधीमा हा जायगा ।  
मुझे न करना याद तुम्हारा प्रांगन गीता हो जायगा ॥

कभी सगगा तुम्हें कि जस दूर कहीं गाथा हा कोई  
कभी तुम्हें मासूम पड़ेगा धँकस छू जाता हा कोई  
कभी मुनोगी तुम कि वहाँ से किमी दिगा न तुम्हें पुकारा  
कभी दिगगा तुम्हें कि जसे घान कर रहा हा हर तारा  
पर न तड़पना पर न बिलताना पर न घायल भर भर साना तुम  
तुम्हें तड़पना देव विरह गुफ घोर हठोला हा जायेगा ।  
मुझे न करना याद तुम्हारा प्रांगन गीता हो जायेगा ॥



याद सुखद उसकी बस जग में होकर भी जो दूर, पास हो,  
 किन्तु व्यर्थ उसकी सुधि करना जिसके मिलने की न प्राप्त हो,  
 मैं भव इतनी दूर कि जितनी सागर स मरुमल की दूरी  
 और धमी क्या ठीक कहीं से जाये जीवन की मजबूरी  
 गीठ-हंस के हाथ इसलिये मुझको मत भेजना संविधा  
 मुझको मितला देस तुम्हारा स्वर दर्दीसा हो जायेगा !  
 मुझे न करना याद तुम्हारा प्राणन गीता हो जायेगा ॥

मैंने कब यह चाहा मुझको याद करो, जग को तुम भूलो ?  
 मेरी यही रही स्वाहिदा बस मैं जिस जगह रहूँ तुम फूलो  
 फूल मुझे दो जिससे बे चुम सकूँ न किसी धन्य के पम में  
 और फूल जाओ—से जाओ दिखाराओ जन-जन के मग में  
 यही प्रेम की रीति कि सब कुछ देता, किन्तु न कुछ सेना है  
 यदि तुमने कुछ दिया प्रेम का बन्धन डीसा हो जायेगा !  
 मुझे न करना याद तुम्हारा प्राणन गीता हो जायेगा ॥



क्या कहा ?— सत्य सस ब्रह्म और सच निष्ठा है  
यह सृष्टि परापर केवल छाया है भ्रम है  
है सपन-सा निम्नार सबल मानव-जीवन  
यह नाम रूप-सौन्दर्य प्रबिधा है तम है ?

मैं कैसे कह दूँ पूल मगर इस धरती को  
जब सब सब रोड मुझे यह गोम विस्ताती है  
मैं कैसे कह दूँ निष्ठा है सम्पूर्ण सृष्टि  
हर एक बनी जब मुझे दल धरतीभी है ।

जीवन को केवल सपना मैं क्या समझूँ  
जब नित्य सुबह आ मुरझ मुझे जगाता है  
कैसे मानूँ निर्माण हमारा व्यर्थ विफल  
जब रोड हिमासय टेंबा होता जाता है ।

यह जान तुम्हीं मोचा समझो परमो जानो  
मुझको तो इस मिट्टी का कण-कण प्याग है  
ह प्यार मुझे जग स जीवन के दार दार स  
कण-कण पर मैंने सपना मह उतारा है ।

मुस्तावा है जब चाँद निया की बाहों में  
सपन मानो तब मुझ पर खुमार धा जाता है,  
वाँसुरी बजावा है कोयल की जब साजन  
कोई साँवरिया मुझे पाद धा जाता है !

निज धानी धून उड़ा-उड़ा कर गई कलज  
जब दूर खेत से मुझकी पास घुमाती है  
तब मेरे तन का रोम रोम गा उठता है  
घों' साँस-साँस मेरी कबिता बन जाती है !

तितली के पंख सगा जब उड़ता है बसन्त  
तरु-तरु पर बिखराता कुंकुम परिमल पराग  
तब मुझे जान पड़ता कि भ्रम की दुसहन का  
घस्र' से ज्यादा घस्र है सारा मुहाग ।

बुलबुल के मस्त तराने की स्वर-धारा में  
जब मेरे मन का सूनापन खो जाता है  
संगीत दिखाई देवा है सागर मुझे  
तब तानसेन मय भीबित हो जाता है ।

जब किसी गगनधुम्बी गिरि की थोटी पर चढ़  
बक-बक फिर फिर घाती है मेरी बिफल दृष्टि,  
तब वायु काम में चुपके से कह जाती है  
'रे किसी कल्पना से है छोटी नहीं सृष्टि ।

कलकल ध्वनि करती पास गुजरती जब मदियाँ  
है स्वयं छतक उठनी तब प्राणों की पायल  
फँसाता है जब सागर मिलमातुर बाँहें  
तब लगता सपन एकान्त नहीं, सपन है हमबन ।

प्रेमियारी निशि में बैठ किसी तरह के ऊपर  
जब करता है पवित्रा अपने 'पी' का प्रकाश  
तब सच मानो मामूम यही होता मुझको  
गा रहे विरह का गीत हमारे सूरदास !

जब भाँति भाँति के पल-पसेरु बड़े मुषह  
निज गायन से करते मुखरित उपवन-कानन  
सम्मुख बड़े तब दिखलाई देते मुझको  
सुससा गात निज विनय-यत्रिका रामायण ।

पतझार एक ही मोंक मकरोरे में धाकर  
जब नष्ट भ्रष्ट कर देता बगिया का सिंगार  
तब तिनका मुँह से कहता है वस इसी तरह  
प्राचीन बनगा नव-संस्मृति के लिए धार ।

जब बैठ किसी मुरमुट म वो भोसे भोले—  
प्रमी सालते हृदय निज सेकर प्रेम नाम  
तब सता-जास स मुँके निकलत दिखलाई—  
देते है अपने राम जानकी पूणकाम ।

अपनी तुलसी घाँटों से बंधन गिमु काई  
जब पड़ लेता है भरी धारमा के धार  
तब मुझको मगना स्वग यहीं है धामपास  
सो धार मुक्ति स यद्वर है बंधन मद्धर !

मिस जाता है जब पमी लगा सम्मुख पपपर  
भूमे - भिगमगों नगों का मूना बजार  
तब मुँके जान पटता कि तुम्हारा वह स्वयं  
है ताज रहा धरती पर मिट्टी का मजार ।

यह सब असत्य है तो फिर बोसो सच क्या है—  
 वह ब्रह्म कि जिसको कभी नहीं तुमने जाना ?  
 जो काम न प्राया कभी तुम्हारे जीवन में  
 जो बुन न सका यह साँसों का ताना-बाना ।

माई! यह दर्शन सन्त महर्षों का है बस  
 तुम दुनियाँ वाले हो दुनियाँ से प्यार करो  
 जो सत्य तुम्हारे सम्मुख भ्रूषा नगा ह  
 उसके गाधो तुम गीत उसे स्वीकार करो ।

यह बात कही जिसन उसको माझूम न था  
 वह समय धा रहा है कि मरेगा जब ईश्वर  
 होगी मस्जिद में मूर्ति प्रतिष्ठित मानव की  
 धी' शान ब्रह्म को नहीं मनुज को देगा स्वर ।



जब सूना सूना

१५

जब सूना सूना तुम्हें सगे जीवन घपना  
तुम मुझे बुसाना—मैं युवन बन धाऊँगा !

जिस दिन तक बगिया में मौरों की रहे भीड़  
उस दिन तक तुम मत घाने देना मुझे पाम  
जिस दिन तक बुलबुल गाती रहे बहारों को  
उस दिन तक मत पूछना कि मैं क्यों हूँ उनास  
लेकिन जिस दिन पथ पर सपनों को उडे घूल  
तब मुझे बुसाना—मैं वन्दन बन धाऊँगा !

जब सूना सूना तुम्हें लगे जीवन घपना  
तुम मुझे बुसाना—मैं युवन बन धाऊँगा !!

जब गुँप रहा हो घाँद रात के तुले बाल,  
तब याद न करला इस कुटिया धँपियारी को  
मपुञ्जु मपुञ्जु में जब सिन्दूर मुटाठी हो  
जिसरा देना तब इस बिषबा फुलवारो का,  
लेकिन धाकर पतभार तुम्हें जब भकभोरे  
तब मुझे बुसाना—मैं सावन बन धाऊँगा !

जब सूना सूना तुम्हें लगे जीवन घपना  
तुम मुझे बुसाना—मैं युवन बन धाऊँगा !!

जब तक नगिस की पाँति नयन में धरमाये,  
 तब तक न समझना तुम इन धाँसों की भाषा  
 मुस्कारों धधरों पर जब तक फूले गुसाव  
 तब तक न जानना तुम मैं हूँ कितना प्यासा  
 पर जब कोई धगार कपोलों को बूमे  
 तब मुझे बुलाना—मैं धुम्बन बन धाऊँगा !

जब सूना सूना तुम्हें लगे जीवन धपना  
 तुम मुझे बुलाना—मैं गुंजन बन धाऊँगा !!

हो मठ में जब तक गंज दास-बहियासों की  
 मेरी पूजा तब तक तुम ठुकराते रहना  
 गीतों के गधरों से जब तक तुम सजे रहो  
 मेरे धाँसू तब तक तुम सड़पाते रहना  
 बह जाये मठ पर जब शृंगार बिधर जाये  
 तब मुझे बुलाना—मैं दर्शन बन धाऊँगा !

जब सूना सूना तुम्हें लगे जीवन धपना  
 तुम मुझे बुलाना—मैं गुंजन बन धाऊँगा !!

जब प्यार छुटाने निकसो तुम सखार वीष  
 मेरे धनाथ मन को तब याद नहीं धाना  
 वरदान बाँटने जाओ जब तुम धुनियाँ में  
 मेरे मिशुक-सपनों पर छाक सड़ा जाना  
 पर जब ठुकराओ प्यार किसी का तुम जग में  
 तब मुझे बुलाना—मैं पाहन बन धाऊँगा !

जब सूना सूना तुम्हें लगे जीवन धपना  
 तुम मुझे बुलाना—मैं गुंजन बन धाऊँगा !!

प्राण-गीत

मेरा मन तो है क्रेद कपल के घूँघट में  
 तन मरघट के हाथों का एक खिलीना है  
 ये मेरी ससिं ही मेरी जजीरें हैं  
 कुछ ज्ञात नहीं किस जगह मुझे कब सोना है  
 इस पर भी यदि शृंगार तुम्हें मेरा भाये  
 तो मुझे घुसाना—मैं दरपन घन मारूँगा !  
 जब सूना सूना तुम्हें लगे जीवा अपना  
 तुम मुझे घुसाना—मैं गुजन घन मारूँगा ॥





## तुम्हारे बिना आरती

१६

तुम्हारे बिना आरती का दिया यह  
न बुझ पा रहा है न जल पा रहा है।

भटकती निशा कह रही है कि तम में  
दिये से किरन फूटना ही उचित है  
घमम चीखता पर बिना प्यार के तो  
विष्णु रस का टूटना ही उचित है  
इसी वन्द में रात का यह मुसाफिर  
न रुक पा रहा है, न जल पा रहा है।

तुम्हारे बिना आरती का दिया यह  
न बुझ पा रहा है, न जल पा रहा है।

मिसल ने कहा था कभी मुस्करा कर  
हँसो फूल वन विश्व भर को हँसाओ  
मगर कह रहा है विरह भव सिंसक कर  
झरो रात-दिन धनु के दाब उठाओ  
इसीसे मयन का विकल जल-कुसुम यह  
न रुक पा रहा है न जल पा रहा है।

तुम्हारे बिना आरती का दिया यह  
न बुझ पा रहा है न जल पा रहा है।

कहाँ दीप है जो किसी उर्वशी की  
किरम-उंगलियों को छुये बिन जसा हो ?  
विना प्यार पाये किसी मोहिनी का  
कहाँ है पथिक जो निशा में जसा हो ?  
अचंभा धरे कौन फिर जो तिमिर यह  
न गल पा रहा है न बल पा रहा है ।

तुम्हारे बिना भारती का दिया यह  
न बुझ पा रहा है न जल पा रहा है ।

जिसे है पता घूम के इस मगर मे  
कहाँ मृत्यु वरमाल लेकर झड़ी है ?  
जिसे ज्ञात है प्राण को सौ छिपाये  
चित्त में छिपी कौन-सी फुसफुड़ी है ?  
इसीसे यहाँ राज हर जिव्दगी का  
न छिप पा रहा है न खुल पा रहा है ।

तुम्हार बिना भारती का दिया यह  
न बुझ पा रहा है न जल पा रहा है ।



एक पाँव बस रहा

३७

एक पाँव बस रहा प्रसंग प्रसंग  
और दूसरा किसी के साथ है!

एक साँस मौठ के करीब है,  
एक साँस जिन्दगी के पास है  
एक फूस में खिपी हुई बहार  
एक फूस में खिजा उदास है

इसलिए विपाद में बिलास में—

एक पाँव बस रहा प्रसंग प्रसंग  
और दूसरा किसी के साथ है!

एक बार कर रही सिंगार सेज  
एक बार भर रही पिता घँवार,  
एक राह भा रही है डोसियाँ,  
एक राह धपियाँ बनी हजार,

इसलिए पिया के प्रम-मन्थ पर—

एक पाँच बस रहा प्रसग प्रसग  
 और दूसरा किसी के साथ है !

इक दिया जसा कि बस उठी सुवह  
 इक दिया बुझा कि रात हो गई,  
 एक राह सगी कि बह गया किसा,  
 एय राह सगी कि मात हो गई,

इसलिए अनादि हार-जीत में—

एक पाँच बस रहा प्रसग प्रसग  
 और दूसरा किसी के साथ है !

इक हवा बसी कि बिस उठा बसन  
 इक हवा बसी कि सब उमड़ गया  
 एक पग उठा कि राह मिस गई,  
 एक पग उठा कि पय बिलुड़ गया

इसलिए मिसन बिरह की बाट में—

एक पाँच बस रहा प्रसग - प्रसग  
 और दूसरा किसी के साथ है !

बात कुछ हुई कि हँस पड़े धपर  
 बात कुछ हुई कि धाँस रो उठी,  
 बूँद दूब इसी कि बस गया गुबार,  
 बूँद इक इसी कि दिस भिगा उठे,

इसलिए प्रसन्न्य प्रभु-हास से—

एक पाँव पस रहा प्रसग-प्रसग  
और दूसरा किसी के साथ है !

एक बाल इस तरह किसी-किसी  
कि एक-एक पात फूस बन गया  
एक बाल इस ऊपर मगर मुटी  
कि एक-एक फूस धून बन गया

इसलिए सिंगार में सँहार में—

एक पाँव पस रहा प्रसग-प्रसग  
और दूसरा किसी के साथ है !

एक बह लहर उठी समुद्र में  
कि लुब-बलुब जहाँ पार हो गया  
एक बह लहर धनी नगर-से  
कि नाव के समीप पार खो गया,

इसलिए कगार-घार-घार पर—

एक पाँव पस रहा प्रसग-प्रसग  
और दूसरा किसी के साथ है !

एक ईंट पर सधा हुआ महल  
एक ईंट पर खड़ा 'मखान' है,  
एक बार जी रही हरेक साथ  
एक बार मर रहा जहाँ है,

इसलिए जनम-मरम के गाँव में—

एक पाँव पस रहा प्रसग - प्रसग  
और दूसरा किसी के साथ है !

कहते कहते थके

१८

कहते कहते थके कल्प युग, वर्ष, मास दिन,  
पर जीवन की राम-कहानी अभी धाप है !

सौ-सौ बार उठा जुड़कर सपनों का मेसा,  
सौ-सौ बार गया मंजिस तक प्राण भकेसा,  
बूँद बूँद बन हुए हज़ारों बार नयन के,  
ठहे करोड़ों बार महम घाँसी-कैपन के  
पर है यह इन्सान कि फिर भी जिसके मन में  
भीड़ बसाने की नावानी अभी धाप है !

कहते कहते थके कल्प, युग, वर्ष, मास, दिन  
पर जीवन की राम-कहानी अभी धाप है !

छिन छिन धीएँ हो रहा दबास-कोप जीवन का,  
छिन छिन बढ़ता जाता है व्यापार मरण का,  
हुए जा रहे दूब दूक सब धाँद-सितारे,  
बने जा रहे मरु दिन - दिन सागर-सरि सारे,  
पर है यह धादपर्य कि मिट्टी की धाँसों में  
एक बूँद धाँसु का पानी अभी धाप है ।

कहते कहते थके कल्प युग, वर्ष मास दिन  
पर जीवन की राम-कहानी अभी धाप है !

'प्राण' प्राण का वर्तमान कम का प्रतीक है  
 और भविष्यत् सिद्ध भूत का मूक गीत है  
 प्राणा बनकर जन्म मरण बन जाता हर पल  
 बस फुटकी भर साक खिन्दगी भर की हसबस  
 लेकिन धुम्धी-धुम्धी प्राणों की हर घड़कन में  
 किसी थोट की पीर पुरानी अभी छेप है।

कहते कहते सके कल्प युग, वर्ष मास दिन  
 पर जीवन की राम-कहानी अभी रोप है !



इस तरह तप हुआ

१२

इस तरह तप हुआ साँस का यह सफ़र  
चिन्दगी बन गई, मौत बसती रही ।

एक ऐसी हँसी हँस पड़ी छल यह  
साध इन्सान की मुस्कराने सगी,  
तान ऐसी किसी ने कहीं छेड़ दी  
घाँस रोती हुई गीत गाने सगी  
एक नाबुक बिरन छू गई इस तरह  
गुद-बगुद प्राण का दीप जलने लगा  
एक धावाज धाई किसी घोर स  
हर मुसाफ़िर बिना पाँव बसन लगा  
रूप केगाँव का पर मिसा छोर यूँ—  
दह बढ़नी रही उम्र बसती रही ।

इस तरह तप हुआ साँस का यह सफ़र  
चिन्दगी बन गई मौत बसती रही ।



एक दिन देखा है कि स्त्री हुई  
 चाँदनी चन्द्रमा से लड़ी दूर है,  
 एक दिन यह सुना फूल की बोट से  
 एक पापाण का दिस हुआ चूर है,  
 एक दिन प्राणियों ने कहा प्रांस से  
 रोम हम प्रायगे कस बदम कर कफन'  
 एक दिन एक बोसा घसस दीप से  
 भूम सूँ मैं तुम्हे तब मुम्हे कर बफन',  
 र सुनी मनसुनी बात ऐसे हुई  
 ठ सोया घसस, सी मचसती रही ।

इस तरह तब हुआ साँस का यह सफ़र  
 बिन्दगी बक गई, मौत बसती रही ।

एक दिन कह रही थी भ्रमर से कमी  
 'भोठ बूठे किये हैं मुम्हे तू न छू'  
 कह रहा था भ्रमर 'सुन घरी बाबसी  
 निष्कलुप मैं बनूँ ते मुम्हे तूम तू'  
 या गया एक झोंका तभी उस तरफ़  
 हिल उठी झाँस तो भू गमन हिस गये'  
 कुनमुनाई-सजाई कमी तो बहुत  
 घाप ही घाप लेकिन घपर मिस गये,  
 मन्त ऐसे हुआ उस मिलन का मगर  
 दिन सिसकता रहा रात बसती रही ।

इस तरह तब हुआ साँस का यह सफ़र  
 बिन्दगी बक गई, मौत बसती रही ।

प्राण गीत

एक दिन जिन्दगी की कड़ी धूप में  
 दो पक्षेड़ मिसे मुक्त नम के तसे  
 कुछ न बोसे, म बोसे न कुछ बात की  
 हो गया प्यार लेकिन मयन जब मिसे  
 मोठ ज्यों ही उठे तो नियति हंस उठी  
 प्राणियाँ बन पकीं तम बरसने लगा,  
 छुट गया हाथ से हाथ भीगा हुआ,  
 गानियाँ मार ससार हँसने लगा  
 और फिर यूँ कटी वह बिरह की निशा  
 स्नेह बुझता रहा याद असता रही ।

इस तरह तय हुआ साँस का यह सफ़र  
 जिन्दगी एक गई मोत पसती रही ।

एक दिन एक भाया पक्षिक द्वार पर  
 टुक रका, एक - दो घूँट पानी पिया  
 पक्ष-सफ़र का लिया साथ सामान सब  
 एक फेंकी बिबरा दृष्टि धौ पस दिया  
 उस दिबस से मगर एक तस्वीर सी  
 धरु की भीति पर रोज लिखने सगी,  
 रंग भरने सगे जागकर रात दिन  
 मोठियों स गली-नीस सिषने सगी,  
 बिन्यु पूरा हुआ बिम वह इस तरह  
 रंग हुए एक सब, छवि बदसती रही ।

इस तरह तय हुआ साँस का यह स  
 जिन्दगी एक गई मोत पसती र

एक दिन एक तारा गिरा टूटकरा  
 एक उजड़े हुये नीड़ ने रक्त मिया  
 फूस ने मुस्कराकर तमी यह कहा—  
 'यह बुझा है दिया क्यों इसे दिस दिया?'  
 दोसमे तम मगा नीड़ का एक तूण  
 'हर दुखी को दुखी से सवा प्यार है,  
 भासुर्पो के लिए गोद बस भूल है  
 फूस को तो घरे धीरा ससार है ।  
 किन्तु भगड़ा सतम इस तरह यह हुमा  
 फूस भरता रहा भूस खिलती रही ।

इसी तरह तय हुमा साँस का यह सफ़र  
 बिन्दगी तक गई, मौत बसती रही ।

एक दिन एक बोली पिटी गोट यूँ—  
 एक मौका धगर तू मुझे धौर दे  
 मान सच यह कि बाबी बदम दू धमी  
 हार को जीत से जीत को हार से  
 सुन खिलाड़ी प्रथम धार किम्भना-धरा  
 फिर बदम गोट वह नाम बसने मगा  
 अब मगी भवत सब तब बहुत देर में  
 सेस का कुछ तराजू बदमने मगा  
 पर हुमा सेस वह भी सतम इस तरह  
 गोट पिटती रही नाम बसती रही ।

इस तरह तय हुमा साँस का यह सफ़र  
 बिन्दगी तक गई मौत बसती रही ।

यूही यूही

२०

भोर हुआ

घुप बढ़ी

घोर हुआ

साम बढ़ी

यूही यूही एक दिन निकल गया ।

श्राण तपे

प्यास बगी

भेष घिरे,

झड़ी सगी

यूही यूही हिम हिमाद्रि गल गया ।

स्नेह चुका,

साँस बकी

त्रिमिर भुजा

ज्यात्रि बिबो

यूही यूही एक दिन जल गया ।

रुप हँसा

राम रखा

मिसल मजा

विग्रह बचा

यूही यूही एक स्वप्न धल गया ।

जन्म रोया  
 मृत्यु हँसी  
 आयु खुटी  
 धूस बसी

यूही यूही बस मनप्य ठस गमा ।



मादमी है मौत

२१

मादमी है मौत से साधार  
पी रहा है इसलिए संसार ।

बूढ़ बनने के लिए बेसब्र बन है,  
पूरा बुढ़ने के लिए व्याकुल सुमन है  
बस रहा है चांद निशि की घाहू में,  
गाद में तम को लिए बचस किरन है

प्राण ! नखर है सकल भृंगार  
इसलिए सौन्दर्य है मुकुमार ।

मादमी है मौत से साधार,  
इसलिए संसार ॥

बज रही सरगम मरण की भू गगन में,  
है पिता की रास सिपटी हर चरण में  
हैस रहा हर बास पर पतझर समय का  
एक बिप की बूढ़ है सबके मन में,

प्राण ! जीवन बया, प्रणय बया प्यार  
एक प्राँसू और एक भंगार ।

मादमी है मौत से साधार,  
जी रहा है इसलिए संसार ॥

धूस को मरभट सवा प्यारा भगा है  
 धमूस को तन षट सदा कारा भगा है  
 पस रहा है गीत भाँसू की डगर में,  
 मूर्यु से हारा सदा बीषन-समर में,

मत कहो रण-क्षेत्र है संसार  
 हारता प्राया मनुज हर बार।

धादमी है मौत से साधार  
 बी रहा है इसिए संसार ॥



यह प्रवाह है

२२

यह प्रवाह है यह न रुका है यह न रुकेगा।

धाने दो घबरोप पवर्तों की काया घर  
सगने दो गिरि षट्टानों की हाट बाट पर  
उठने दो भूपास धीधियों के धांगन से  
भरने दो उल्काघों की बरसात गगन से,  
यह न भौसभो जस गड्डों में जो बँध जाये,  
यह प्रवाह है यह न रुका है यह न रुकेगा।

बुध परवाह नहीं जो धम्बर में हसबस ह  
बिन्ता क्या जो सम्मुख मुरदों का दस बस है,  
पीछ रहा विध्वंस, उह रहा मंमृति का गढ़,  
मानबता की लाग रक्त में पड़ी रही सड़,  
यह न भाग का दूत, पड़े जो इस बस्ती में,  
यह बिबास है यह नृपका ह यह न पकेगा।



मुद्गी में भ्रुकम्प शीघ्र पर मेरू उठाये  
 मयनों में निर्माण कष्ट में राग बसाये  
 एकाकी पायेयहीन तन मन चिर अर्बन्ध,  
 स्वर्ग छीन जाने को जो बड़ रहा निरन्तर  
 उसे झुनाने उसे मिटाने की सोचो मत्त  
 वह मनुष्य है वह न झुका है वह न झुकेगा  
 वह भविष्य है, वह न मिटा है वह न मिटेगा  
 वह विकास है वह न थका है वह न थकेगा  
 वह प्रवाह है वह न रुका है वह न रुकेगा ।



## भादमी को प्यार दो

२३

सूनी सूनी खिन्दगी की राह है  
भटकी भटकी हर नसर-निगाह है  
राह को सँवार दो  
निगाह को निबार दो,  
भादमी हो तुम कि उठो भादमी को प्यार दो,  
दुसार दो ।  
रोते हुए धांसुओं की धारती उतार दो ।

तुम हो एक फूल कम जो फूल बनके जायेगा,  
भाज है हवा में कम खमीन पर ही घायेगा  
पससे बकत बाण बहुत रोयेगा—हसायेगा  
छाक के सिवा मगर न कुछ भी हाथ घायेगा,  
खिन्दगी की छाक लिये हाथ में  
धुमठे-धुमठे सपने लिये साथ में  
रुक रहा हो तो उसे बमार दो,  
बन रहा हो उसका पप बूहार दो ।  
भादमी हो तुम कि उठो भादमी को प्यार दो  
दुसार दो ।

सिन्दगी यह क्या है—बस सुबह का एक नाम है  
 पीछे जिसके रात है धी' भागे जिसके घाम है  
 एक धोर छाँह सपन एक धोर घाम है  
 जमना-बुझना बुझना-जमना सिर्फ़ जिसका काम है  
 न कोई रोक-घाम है

खौफ़नाक-शारे-वियावान में  
 मरपटों के मुरदा मुनसान में,

बुझ रहा हो जो उसे भंगार दो  
 जल रहा हो जो उसे उमार दो  
 घावमी हो तुम कि उठो घावमी को प्यार दो,  
 दुमार दो ।

सिन्दगी की धाँसों पर मौत का खुमार है,  
 धोर प्राण को किसी पिया का इन्तजार है  
 मन की ममजमो कली तो चाहती बहार है  
 किन्तु सन की बासी को पतकर से प्यार है  
 करार है

पतकर के पीसे-पीसे बेश में  
 धाँसियों के कासे-कासे बेश में

जिस रहा हो जो उसे सिंगार दो,  
 कर रहा हो जो उसे बहार दो  
 घावमी हो तुम कि उठो घावमी को प्यार दो  
 दुमार दो ।

प्राण एक मायक है, दर्द एक तराना है,  
 जन्म एक तार है जो मौत को बजाना है  
 स्वर ही रे । जीवन है साँस तो बहाना है,  
 प्यार एक गीत है जो बार बार गाना है,  
 सब को दुहराना है

साँस की सिसक रही सितार पर,  
 प्राँसुओं के गीसे-गीसे तार पर  
 भ्रुप जो हो उसे बरा पुकार दो,  
 गा रहा हो जो उसे मल्हार दो  
 भादमी हो तुम कि उठो भादमी को प्यार दो  
 दुसार दो ।

एक चाँद के बगर सारी रात स्याह है  
 एक फूल के बिना जमान सभी तबाह है  
 जिन्दगी तो खुद ही एक ग्राह है बराह है  
 प्यार भी न जो मिसे तो जीना फिर गुमाह है  
 भ्रुप के पबित्र मेम-मीर से  
 भादमी के दर्द दाह पीर से,  
 जो भूणा करे उसे बिसार दो,  
 प्यार करे उस वै दिम निसार दो,  
 भादमी हाँ तुम कि उठो भादमी को प्यार दो,  
 दुसार दो ।  
 रोते हुए प्राँसुओं की भारती उतार दो ॥



इस पार नहीं, उस पार नहीं

२४

तुम मिलो मुझे मँझपार बीच  
इस पार नहीं उस पार नहीं ।

मैं भी बेसूँ सागर की गहराई क्या है ?  
मैं भी जानूँ सहरों की तराई क्या है ?  
उवशी कहाँ है इस बड़बामस के उस में  
है भ्रमूय कहाँ इस लार भरे नीले जल में

तुम मिलो मुझे मँझपार बीच  
इस पार नहीं उस पार नहीं !

तुम सामन बनकर नयनों के संग पसे-बसो,  
तुम बड़कन बनकर प्राणों के संग हिमो-मिसो  
बन ताप तपाओ कपन-सा लम-मन छिम-छिम  
बन गीठ कण्ठ के गीमे भाँगन में मषलो

तुम मिलो मौन-मनुहार बीच  
इस पार नहीं, उस पार नहीं !

तुम मधुच्छतु में क्षिप्त पड़ो कुमुम सम गंध-मदन,  
 तुम पतझर में झर पड़ो पात सम पीत-बरन,  
 तुम सम में सैरो तन्त्रा की सहरो पर तिर,  
 तुम किरनों में झूलो चपस-मन, चपस-चरन

तुम मिसो ज्योति-धैषियार बीच  
 इस पार नहीं, उस पार नहीं !

तुम ध्युभरी झालों में झूब-उतराघो,  
 तुम सूने धर-झारों पर दीप जला घ्राघो  
 सुस-दुस की भासा गूष गूष दो तुम जीवन  
 तुम मधु-विष दोनों एक पात्र में धर साघो,

तुम मिसो ध्यु-भगार बीच,  
 इस पार नहीं, उस पार नहीं !

जब धूलू बना तुम गति भरे विषप्रिष्ठ पग की,  
 जब धूलू बनो तुम मंडित तब भरे मग की  
 जब झूलू बनो तुम तब मेरी पूजन प्रतिमा  
 जब ऊर्लू बनो तुम मन-सीमा भरे दुग की,

तुम मिनो प्राप्ति-मख्हार बीच  
 इस पार नहीं, उस पार नहीं !

निर्जीव धरा पर धरसाघो तुम अमृत-धार  
 कर्म बन्मप पर गिरो वय्य सम महाधार,  
 विशुद्धस मानवता इन्दाइति म बदलो,  
 अइता-यसुत्व-वैपम्य करो तुम ताग-शाग

तुम मिसो सुजन-संहार बीच  
 इस पार नहीं, उस पार नहीं !

मैं बाँध सकूँ तुमको जीवन की हसबस में  
 सुन सकूँ तुम्हारा शब्द भीड़-कोलाहल में  
 मैं पूज सकूँ तुमको पथ पर बसते-बसते,  
 मैं देख सकूँ तुमको दिशि-दिशि, नम जस, यम में,

तुम मिस्रो सकल संसार बीच  
 इस पार नहीं उस पार नहीं !



कौन तुम हो—

२५

रात के कञ्जस-तिमिर में मिस्रमिस्राठी  
प्रात की कंचन-किरण-सी कौन तुम हो ?

श्याम-पट में स्नात-स्मित-शशि-मुस छिपाये  
जुगुनुओं के दीप प्रचस में जसाये  
दामिनी दुति ज्योति मुक्ताहार पहने  
हन्द्रपनुपी कपुकी तन पर सजाये  
भूद के धुंधरु बजाठी पल निमिप बस  
सोचनों में धधु-धम-सी कौन तुम हो !  
प्रात की कंचन-किरण-सी कौन तुम हा !!

या रहीं तुम ह्वास सौटी या रही है  
गा रहीं तुम भन्न समृति या रही है  
मुक गई है मृत्यु जीवन की घरण में,  
चेतना बन देह बिसरो जा रही है  
नैश-तम को ज्योति का वरदान देती,  
परण में जीवन-धरण-सी कौन तुम हो !  
प्रात की कंचन-किरण-सी कौन तुम हो !!



कौन हो तुम स्वास में सरगम बनी-सी  
 गरम के घट में धमूत-मधु को बनी-सी  
 नास में निर्माण सुख शूगार की श्री  
 स्वप्न में सत की सरम छायातनी थी  
 चरण की गति पंच की यति सृष्टि की कृति  
 बिश्व में कारण-करण-सी कौन तुम हो !  
 प्राण की कंचन किरन-सी कौन तुम हो !!

भर रहे सत घट हिमामय धनि-करण से  
 स्वाति बासक पी रहे प्यासी तपन से  
 एक दुर्वन मोन में सयीठ सारा  
 बँध गया धमरत्न नखर एक क्षण से  
 वेदना में मधुर स्वीकृति-सी किसी को  
 बिरह के पत्र पर मिसन-सी कौन तुम हो !  
 प्राण की कंचन-किरन-सी कौन तुम हो !!

प्राण से परिचित नयन से बिर अपरिचित  
 मुष्करता में मोन बिर बिर मोन मुष्करित  
 ध्याम में धन्दिनि धबन्दिनि धारणा में  
 शब्द में सीमित स्वरों में बिर असीमित  
 मृदुटि में सय-सृष्टि धधरों में धमूत-विष  
 धधित में चेतन-धतन-सी कौन तुम हो !  
 प्राण की कंचन किरन-सी कौन तुम हो !!



## एक बार यदि अपने मंदिर

२६

एक बार यदि अपने मंदिर मंदिर भयरो से  
छू तो मेरे तृपित भयर मंदिरांगमयी तुम  
सब कहता हूँ हँस-हँसकर मैं

जग मर का  
विष पी जाऊँगा ।

मैं सोया था किसी कफ़न के नीचे धककर  
तुमने मुझे जगा, मुझ में सगीत जगाया  
कोई बिल्ला छिपाये बठी थी मेरा तन  
तुमने मुझे सुरा मिट्टी के हाथ बिकाया  
मज जागी यह प्यास मुझे पी जायेगी जो  
यह न बुझी हूँ यह न बुझेगी पीकर भरकर  
सो-सो बार भ्रमृत बरसा पर यह घतपत हूँ  
सो-सो बार गरम पीकर भी यह जागृत, पर-  
एक बार यदि अपने भरण धरुण भयरो स  
पी तो मेरी प्यासी प्यास धनंगमयी तुम  
सब कहता हूँ कोटि कोटि

बरदान तृप्ति  
क दुबराऊँगा ।

मुझको पारों धोर खड़ी है मोत समेटे  
 पल पल पर हू समय साँप-सा फल फँसाये,  
 क्षिर पर धरी हुई पचीस वर्षों की साँसें  
 युगस-करोँ में निमित्त सोह-जबीर पिन्हाये  
 इस पर भी पर बन्ध जुबाँ करने को मेरी  
 साँसों ठेकेदार धरम के खड़े कमर कस  
 अपने दुख में रोना दूर न गा सकता हूँ  
 मैं कितना मजबूर यहाँ कितना मैं बेबस ?  
 एक बार पर अपनी मरम मरम बाँहों में  
 बाँध मुझे सो दण भर मवि निर्बन्धमयी तुम  
 सब कहता हूँ मैं अपनी क्या

भुग की मुक्ति  
 बुसा साजँगा ।

मैं दुनिया भर में घूसा भटका भरमाया  
 पर न मिला कोई जो दुर्बलता दुसराता  
 घूस हँसाकर, फूस रुसाकर गये हज़ारों  
 किन्तु न कोई ऐसा जो दुख-दर्द सँटाता  
 धमरों की धारती उतारी करी धर्ममा  
 गये विवस पर एक बार भी सौट न धाये  
 जाकर बसा गगन की चन्द्र-चाटियों में भी  
 पर धाँसों के धसु वहाँ भी सूख न पाये  
 एक बार पर अपनी ममित ममित पलकों में  
 मेरे धसु मुसा सो यन्ि धानन्दमयी तुम !  
 सब कहता हूँ मैं धमरों के

कर से धमूठ  
 धिना साजँगा ।

अपने दुख का गीत लिखा मैंने जब रोकर  
 सुखी जगत ने हँसकर खूब मजाक उड़ाया,  
 सुख का गीत रचा जब अपनी दब दबाकर  
 निर्दय घामोजक ने कसम-कुठार घमाया  
 सोच रहा जब एक गीत ऐसा गाया मैं  
 जिसको सब जग, सब युग-वास रहेँ दुहराते  
 इससे पकड़ा है जीवन का अघसत सक्लिन  
 सब युग वाले शब्द नहीं मुझको मिला पाते,  
 एक बार पर सबल सबल करुणा-करुणस निज  
 मरी स्याही मे घोसी शब्दांगमयी तुम !  
 ओ सी जीवन गीत

मरण की छापी पर  
 मैं लिख पाऊँगा ।



भूखी भरती अब भूख मिटाने आती है !

छिपते जाते हैं सूरज चाँद-सितारे सब  
मुरवा मिट्टी मन्बर पर चढ़ती जाती है  
हो सावधान ! सँभसो धो ताज-तख्तवासो !  
भूखी भरती अब भूख मिटाने आती है ।

कंकालों की जुड़ रही भीड़ बीराहे पर,  
फिर से बननेवासा है कोई बख्तवान  
बिक रहे प्राण बिक रहे शीश बिक रही मौत  
फिर से जगने को हैं सोये भरघट मसान  
हर घोर मची है होमो लून-पसीने की  
हर घोर घँगारों की खेती महराती है ।  
हो सावधान ! सँभसो धो ताज-तख्तवासो !  
भूखी भरती अब भूख मिटाने आती है ॥

हैं काँप रही मन्दिर-मस्जिद की मीनारें  
 गीठा - कुरान के धर्म बदसते जाते हैं  
 ढहते जाते हैं दुग द्वार मनबरे-महल  
 सख्तों पर इस्पाती बादस मँडराते हैं  
 भोगडाई सेकर भाग रहा इम्सान नया  
 जिन्दगी कब्र पर बैठी बीन बजाती है।  
 हो सावधान ! सँभसो धो ताज-तस्तवासो !  
 भूखी भरती घब भूख मिटाने घाती है ॥

मासूम सहू की गगा में घा रही बाढ़  
 नादिरशाही सिहासन डूबा जाता है  
 गत रही बर्फ सी डाभर की कासी बोठी  
 एटम को भूसा पेट घबाये जाता है  
 निकसा है मम पर मये सयेरे का सूरज  
 हर किरन गई दुसहिन सी सेज सजाती है।  
 हो सावधान ! सँभसो धो ताज-तस्तवासो !  
 भूखी भरती घब भूख मिटाने घाती है ॥

पट रही समय की भौंहों में ससबटें-गिहन  
 बिप्याबस करवट पीध बदसनेवाला है  
 उठनेवासी है धाग समुन्दर के दिस से  
 हिमवान किसी का घून उगसनेवाला है,  
 हर एक हवा का रस कुछ बदसा-बदसा है  
 हर एक जिन्दा से गरमी सी दिखसाते है।  
 हो सावधान ! सँभसो धो ताज-तस्तवासो !  
 भूगी भरती घब भूख मिटाने घाती है ॥

सामने थी सास उपवन की पड़ी  
 वेकपल धर्षी घमर की थी लड़ी,  
 थी धरी पट्टाम जसती घोठ पर,  
 गुंथती थी धाँस सोहू की लड़ी  
 फूँने को प्राण सेकिन धूम में—  
 कंटकों में फूल मुस्काता रहा।

बाँद को छोकर हँसा है कब गमन  
 सूर्य से बिछुड़ी कहीं धिरकी किरन।  
 तोड़ धाकपण कमी एकाकिनी  
 है न जस सकसी घरा भी एक क्षण  
 पर भकेसा सब तरह बिछुड़ा हुआ—  
 कंटकों में फूल मुस्काता रहा।

हो धरा मुखरित, दिशा हर मा उठे  
 सृष्टि में मधुमास फिर सहारा उठे  
 हँस उठे सूनी सजस धाँस सभो  
 मलय मिट्टी से समूठ धरमा उठे  
 इसलिये पाकर भूणा भी विश्व से—  
 विश्व पर मैं प्यार बरसाता रहा।

सृष्टि हो जाये सुरभिमय इसलिये  
 कंटकों में फूल मुस्काता रहा।



“३० जनवरी—एक आदेश”

२६

‘३० जनवरी—एक आदेश’

हैं तीस जनवरी आज न म्याही मांग कम्म  
बुद्ध मिसना है तो माँसू कायज पर उधार  
गाने का है गर बाव तोड़ दे यह बीणा  
बन्दूक उठा, गोली निशान कर भर मल्हार।

मा चित्रकार ! तस्वीर देवता की न लीख  
जो मनुज भर गया है उसको दे रूप-रंग  
यमुना तट पर सो रहा मसीहा जो अपना  
उसको जीवित कर भर उसमें जीवन उमंग।

ओ जिल्ली ! मूर्ति न बड़ पुत्रों को देख उपर  
गोली साकर से रखा प्रेम प्राप्तिरी दबास  
सोह क बपड़े पहने शान्ति बिमछती है  
दोले-दोले बास्त्र धक गया है बिकास।

इतिहासकार ! यह पृष्ठ घेंपेरे का न जोड़  
प्राणवासी सदियाँ कानी हो जायेंगी  
ओ बकि ! इस नफरत को मत दे अपनी जुबान  
साधें जो बुद्ध जो रहीं न वे जी पायेंगी।



वैज्ञानिक ! ऐटम बम्ब फेंक मत धीर वमा—  
 है मागासाकी भव तक मुरवों का बजार  
 टंकी के नीचे भव तक पड़ी ठड़पती है  
 वह बेस, कोरिया बीष एशिया की सहार ।

मत धस बजा धो मठ मस्जिद धाजान न दे ।  
 कर रहा सहीरों का सहीद मरणाभिपेक  
 भाहिस्ता बोस भरे धो मजहब की किताब ।  
 हो गया धाज सामोघ बिपव भर का बिबेक ।

सब उठी भलो उस राजभाट पर धाज जहाँ  
 बुन रही कफन कल्पना, बिता रब रहे धन्द  
 हैं मूक अहाँ सी सी कबियों के महाकाव्य  
 धानन्द स्वय ही जहाँ हो रहा निरानन्द ।

पर छहरो अपने रक्त-समे इन हाथों से  
 उसकी समाधि मत छुओ न दो पूजापापी  
 सिंहासन छोड़ो भगर बन्वना करनी है  
 पब पर जाओ मर रहे जहाँ सासों पापी ।



मम आशा नहीं है

३०

तन तो आज स्वतन्त्र हमार, लेकिन मन आजाद नहीं है !

एकपुत्र आज बाट दी हमने  
पजीरों स्वदेश के तन को,  
बदल दिया इतिहास, बदल दो  
धाम समय की जाल पवन की

बस रहा है राम राम्य का  
स्वप्न आज साकेत हमार,  
खुनी कफ़ल भोड़ सेटी है  
साज मगर दरप के प्रण को,

मानव तो हो गया आज—

आजाद दासता बन्धन से पर,

मजहब के पोषों से ईश्वर का जीवन आजाद नहीं है !

तन तो आज स्वतन्त्र हमार, लेकिन मन आजाद नहीं है !

हम शोणित से सींच देण के  
पतकर में बहार से धाये  
साद बना अपने तन की—  
हमने नवयुग के फूस लिभाये

बाल बाल में हमने ही तो  
अपनी बाहों का बल बाला,  
पात पात पर हमने ही तो  
अम-अम के मोती बिखराये

क्रन्द, कफ़स सम्पाद सभी से  
बुनबुल भाज स्वतन्त्र हमारी  
श्रुतुओं के अन्वय से लेकिन अभी अमन आजाद नहीं है ।  
तन तो भाज स्वतन्त्र हमारा लेकिन मन आजाद नहीं है ॥

यद्यपि कर निर्माण रहे हम  
एक नई मयरी तारों में,  
सीमित किन्तु हमारी पूजा  
मन्दिर मस्जिद गुरुद्वारों में,

यद्यपि कहते भाज कि हम सब—  
एक हमारा एक देश है  
गूँज रहा है किन्तु भूणा का  
तार बीन की अक्षरों में,

पंगा अमजम के पानी में  
धुसी मिसी अन्वगी हमारी  
मासूमों के गरम सह से पर अमन आजाद नहीं है ।  
तन तो भाज स्वतन्त्र हमारा लेकिन मन आजाद नहीं है ॥

एक कारवाँ के झुण्डे के  
नीचे धाज हमारी गति है  
एक घोर पग एक घोर मुख  
घोर एक ही घोर प्रगति है,

फिर भी जान क्यों हममें से  
कुछ भागे हैं कुछ पीछे हैं  
कुछ समय पर ही खड़े घोर कुछ  
वहाँ जहाँ यात्रा की इति है

धाज हमारा पथ स्वतंत्र—  
मस्जिद स्वतंत्र, पग भी स्वतंत्र पर,  
भेद-भाव से संचालक का सभासन धाजाद नहीं है ।  
तन तो धाज स्वतंत्र हमारा, सेबिन मन धाजाद नहीं है ॥

धाज पा लिया हमने फिर से  
अपनी दिस्सी का सिहासन  
कोहनूर से धाज हमारे राट—  
मुहुट का ज्योतिष्ठ कण-कण

सात जिसे पर सहसता है  
दश - निशाम तिरंगा प्यारा,  
घोर बर रहा विषय हमारे  
हिन्द हिमासय का अभिनन्दन

असे जा रह सूजानी गति—  
से हम पाँच धरे रवि रागि पर,  
बाबा, बाशी की मिट्टी से किन्तु चरण धाजाद नहीं है ।  
तन तो धाज स्वतंत्र हमारा, सेबिन मन धाजाद नहीं है ॥

क्या है यह तूफान

३१

क्या है यह तूफान घरे में  
खुद भीभी बनकर बसता है !

मेरो छाती से टकराकर  
दूट चुकी सासों बट्टानों,  
मेरी घाँसों छूकर जाने  
कितने साबन मेघ सुनाने

सौ - सौ ज्वाभामुक्ती कण्ठ में  
मेरी प्यास दबाये बीठी  
कोटि कोटि रेगिस्तानों को  
मेरी साँसों गयीं सुनाने

भाज घगर पग जजर है  
मग बीहड़ है तो क्या बिठा है ?  
काँटा चुमता अहाँ वहीं मैं—  
वहीं फूल बनकर खिलता है !

क्या है यह तूफान घरे में  
खुद भीभी बनकर बसता है !!

घाँद बहुत रोया था जब  
 मैंने मुत्ताना छोड़ दिया था  
 कोयल झूक न पाई थी जब  
 मैंने याना छोड़ दिया था

सज्जन रात न प्राँज सकी थी  
 दिवस न भूप पहन पाया था  
 जिस दिन मैंने कूठ परा पर  
 घाना-जाना छोड़ दिया था

मुझ मिटाने मुझ बुझाने का—  
 प्रयत्न है स्पर्ध तुम्हारा  
 युग-युग से तम की छाती पर  
 मैं सूरज बनकर जसता हूँ !

क्या है यह तूफान धरे में  
 मुद प्राँधी बनकर जसता हूँ ॥

सौ सौ बार बिताओं ने  
 मरपट पर मेरी सज्ज बिछाई  
 सौ सौ बार धूल ने मेरे  
 गीतों की घासाब धुराई,

सागों बार कपटन न रोकर  
 मेरा तन-भृगार किया पर—  
 एक बार भी जब तन मेरी  
 जग में मौन नहीं हा पाई

मैं जीवन हूँ, मैं यौवन हूँ  
 जन्म - मरण हूँ मेरी क्रीडा,  
 उमर विरह सा विछुड़ रहा हूँ  
 उमर मिसल सा भा मिसला हूँ।

क्या है यह सूफान घरे मैं  
 खुद भाँधी बनकर जसता हूँ !!



## परस तुम्हारा प्राण "

३२

परस तुम्हारा प्राण बन गया दरस तुम्हारा द्वास :

युग युग से निर्जीव शिला सी सेटी थी मिट्टी की काया  
पथराई थी अपस पुतलियाँ, धोठों पर हिम था षड्र घाया  
सेबिन उस दिन बड़कन बन छू गया हृदय जब प्यार तुम्हारा  
किरह बिलस कर पथु बन गया मिसन बिहँस कर हास बन गया  
परस तुम्हारा प्राण बन गया दरस तुम्हारा द्वास बन गया ॥

एक वायु के भँबे सा था भटक रहा जग-जीवन सारा  
कहीं न कोई मोड़, कहीं बिधाम न कोई संग-महारा  
पर जिस दिन प्रतुप्त संसृति की सूनी प्यासी युग घाहों में—  
बिखर गए तुम घरा बन गई सिमिट गए भाकाग बन गया ।  
परस तुम्हारा प्राण बन गया दरस तुम्हारा द्वास बन गया ॥

तुम सोये सो गई निधा तुम जागे जगा ससज्ज-सवेरा,  
सूरज भास-सिदूर बन गया, धजन बन हो गया धँबरा  
धपरों पर जा काम फुल था गिया वही जीवन उदवन में  
झरझर कर पतझर बन गया खिसलिस कर मधुमान बन गया ।  
परस तुम्हारा प्राण बन गया दरस तुम्हारा द्वास बन गया ।



मुरदा या साहित्य, कमाओं पर धी मीन उदासी घाई,  
जब तक धो मेरे करुणाकर। तुमको मेरी याद न घाई,  
धाबी राठ मगर जिस दिन तुम मेरे लिए सिंसककर रोए  
सब कबियों के काव्य रच गए, सब जग का इतिहास बन गया।  
परस तुम्हारा प्राण बन गया दरस तुम्हारा स्वास बन गया ॥

तुमने क्या कर दिया कि मामे सगा मूर्तिका का यह बेसा ?  
समा दिया क्यों इस मदिया पर इतनी नौकाओं का मेला  
तुम क्या हो कैसे हो—है कुछ शाव नहीं, बस यही पता है—  
जम्म वे गया मोह तुम्हारा और मरण सन्यास बन गया।  
परस तुम्हारा प्राण बन गया, दरस तुम्हारा स्वास बन गया ॥



निराकार ! जब तुम्हें

३३

निराकार ! जब तुम्हें दिया आकार स्वयं साकार हो गया ।

युग युग से मैं बना रहा था मूर्ति तुम्हारी प्रकम-प्रसेली  
भाज हुई पूरी तो मैंने प्रकम सड़ी अपनी ही देखी  
सेकिम इससे भी बढ़कर अपराध कर गई प्रजन-वेसा  
तुम्हें सजाने जसा पूस था मेरा भी शृंगार हो गया ।

निराकार ! जब तुम्हें दिया आकार स्वयं साकार हो गया ॥

निगि दिम क टाने-बाने पर बुना कास ने भीर तुम्हारा  
पहमाने जब पला तुम्हें तो वह बन गया शरीर हमारा  
घोर एक दिन जब घाई बरसात हो गया मसा धँचल  
मैंने तुम्हें पुकारा रोकर पर भुगरित संसार ही गया ।

निराकार ! जब तुम्हें दिया आकार स्वयं साकार हो गया ॥

गंघ तुम्हारी धी मैं तो बस बन कर मुमन पुग माया था  
रूप तुम्हारा था मैंने तो बेवस दपग्य दिग्गमाया था  
पर यह दुनिया भी क्या है कैसा अनर्थ हो रहा यहीं पर  
थय तुम्हारा तुम्हें म मितकर मेरा यग विस्तार हो गया ।

निराकार ! जब तुम्हें दिया आकार स्वयं साकार हो गया

जो भी नाम दिया तुमको वह मेरा भी परिचय बन बैठा,  
जिस वक्त तुम्हें विठामा मेरा ही वह प्राण हृदय बन बैठा,  
अर्घ्य बढ़ा जो भी तुम पर बन गया अथु मेरी धार्मिकों का  
जो भी तुम्हें देखने बौद्धा मुझे बेस बनिहार हो गया ।

निराकार ! अब तुम्हें दिया आकार, स्वयं साकार हो गया ॥

सुधि की स पठवार सजाकर फिर अर्धर साँसों की नैया,  
पास धार्मिकों को फँसा कर, तूफानों को बना सिपैया,  
तुम्हें लोभता फिरता था मैं एक सहर ऐसी धार्मिकों का  
डूब गई तूण-तरी, किन्तु मैं सारा सागर पार हो गया ।

निराकार ! अब तुम्हें दिया आकार स्वयं साकार हो गया ॥



मनुष्य की एवरेस्ट विजय पर  
भाखिर मुद्दी भर घूम पहुँच ही गई वहाँ  
आ सके न पाँव जहाँ इतिहास पुराणों के  
भाखिर धरती क घटे ने गूँथ ही दिये  
बरफ़ीले बास पहाड़ों के, पट्टानों के ।

सिन्दूर घूम ही लिया घरा के माथे का  
भाखिर भ्रम के क्रीसादी खून-पसीने ने  
हिम की शहजादी को मुँदरी पहना ही दी  
भाखिर कुछ पानीबासे एक नगीन ने ।

कोमल गुलाब से नाजूक धोठों के पाने  
गाने ही पड़ मौन-मुरदा सुनसानों को,  
घन्त में मुदकसों को देनी ही पड़ी राह  
बिही मानव के धाबारा घरमानों को ।

मखिल को लाखों बार धपेरे का मश्राब  
पहिनाया था धाकर धापी तूकानों न  
बर्फ़ ने उड़ाया बफ़ल राख्त को छिन-छिन,  
सूरज को मिगस सिया कातिल घमघानों ने ।

काँटों - कंकड़ों झाड़ - मँलाइयों ने रोका  
 रोका बूँदों ने बादल ने बरखातों ने,  
 रोका प्यासे नयनों की कल्याण पुकार ने  
 रोका सूने प्रातों ने गीसी रातों ने ।

पत्नी के मस्तक के सुहाग ने मान किया  
 टेरा मूरियों मरी जननी की छाती ने  
 बच्चों की किलकारी ने जाली गले बाँह  
 दी शपथ पिता की बुझती जीवन बाती ने ।

जाती पछाड़ ममता बीसती रही पीछे,  
 स्नेह ने सिसकियाँ भर अंचल भ्रुकम्बोरा  
 वात्सल्य मधुमता रहा एक चुमकारी को  
 प्रेम ने विमल कर बाँप समुन्दर का तोड़ा ।

सेकिन जाने वासा कैसे रुक सकता था,  
 उसको बचने का अपना कौल निभाना था  
 जीकर मरकर कैसे भी हो उसको तो बस  
 अपनी मिट्टी को मंजिल तक पहुँचाना था ।

जब बैठ गई थी मोठ सामने मुँह खोले  
 तब सहसा एक हवा ऐसी भी भाई थी  
 जो दूर देश से किसी नयन के सावन की  
 भाँसूवासी बौछार उड़ा ले आयी थी ।

तब धूम गई थी नयनों के प्राये क्षण भर  
 पत्नी की सजबस्ती सुहागवसी बँदी  
 कानों में भी तब रोमा वा चुड़ी का स्वर  
 रँग गई घरा को भी सावन वाली मेँहदी ।

क्षण भर के लिए पाँच तब वय पर टिठका था,  
मन भी जो किसी नयन के अल में डूबा था  
तब ने भी धमने से इन्कार कर दिया था  
नयनों का हठ सपना सूने से उठा था ।

सेकिन था साहस एक घरे छापी जिसने  
छोड़ा न साथ उन साथ छोड़नेवालों में  
बढ़ता ही गया आसिरी दम तक मजिब पर  
वन भरहस सगला रहा राह के छातों में ।

घो' कर ही दिया घन्त में सक्षय-सेद पूरा  
तन को कर तीर, कमान बना ध्याकृज मन को  
पबरोंपो की प्रस्यधा सींच प्रगति-गति से  
से गया गिस्तर के शिरपर आसिज रज-करण को ।

मासक के साहस घम्य कि तूने दिया निया—  
तू कुम्वन से मूरज को धरमा सकता है  
तू पायल पहना सकता है तूझनों को  
पायाणों को सीसों से भरमा सकता है ।

तूने यह घतमा दिया कि पौरुष के भाग  
मुद्रिकस्त को धपनी ही मुद्रिकस्त पड़ जाती है,  
हिम्मत गर हारे नहीं मुसाफिर धपनी तो  
गुद मजिब उसको बढ़कर गसे सगाठी है ।

तूने निदिष्ट कर दिया कि बहुत धीम्र भू पर  
देखो का सुन्दर स्वर्ग उगारा जायेगा,  
तू ने सवेन कर दिया बहु दिन दूर नहीं  
जब विजय मृत्यु पर भी मानव पा जायेगा ।

पर ठहर गर्भ का मुकुट न पहना गौरव को  
 बस यहीं-यहीं तेरे गिर जाने का भय है  
 कर सका न प्राप्त विजय खुद पर ही तो तेरी  
 यह प्रकृति-विजय रे सबसे बड़ी पराजय है ।



## फूल की सारी कहानी—

३५

पूल की सारी कहानी पूल से  
सँक जा कहती रही कह सब मुबह मुमती रही ।

हाट मिट्टी ने सगाकर साँस की  
रात दिन बषा-खरींग प्राण का  
उम्र भर की यह मगर सौदागरी  
बस कफ़ल ही द सकी इम्मान का  
देह का हृदयदार मरघट बन गया  
छीन कर उछवास ले भागा पवन  
घाग सारी मोम ल ली मूय न  
वन बभारों का गया गाहक गगन  
अधु पे जिनका न दाम चुका नहीं  
हर निगा भरती रही आ हर ज्या मुनती रही ।

पूल की सारी कहानी पूल से  
सँक जा कहती रही कह सब मुबह मुनती रही ॥



एक दिन बठा समुन्दर तीर पर  
 सुन रहा था बुलबुले की मँ कथा,  
 एक जासूस की विली करती तमी  
 पी सडी जिसमें पहाड़ों की ब्यसा  
 बोझ इतना भर मुझे प्रचरज हुआ  
 चल रही है किस तरह यह धार में  
 हँस कहा उसने 'बनाती आह है,  
 भादमी बलवा महीं संसार में।  
 वस तभी से उम्र की यह वीसुरी  
 जन्म वन बजती रही वनकर मरण पुनती रही।

पूल की सारी कहानी पूल से  
 साँझ जो कहती रही वह सब सुबह पुनती रही ॥

पय पर उस रोज जब ठोकर भगी  
 पाँव पथ को गालियाँ देने लगा,  
 ठीकरा दोपी जिस समझा गया  
 इस तरह कह सिसकियाँ लेने लगा—  
 'बोट तुझ से कम न भाई है मुझे  
 मैं नहीं तू है सबव इस भूस का  
 खोमकर तो भाँस खुद बसता नहीं  
 नाम है बदनाम करता पूल का'  
 मैं तभी से देखता हूँ भाज तक  
 ठोकरें खाता रहा पग राह घर पुनती रही !

पूल की सारी कहानी पूल से  
 साँझ जो कहती रही वह सब सुबह पुनती रही ॥

एक तिनके मे किसी सूफान के  
 साथ ठडकर जब निया आकाश छू  
 एक उजड़ी शाख से उसने कहा  
 'देख मैं किस ठौर हूँ किस ठौर तू'  
 सम से डामी मुकी पर कूद हो  
 बापु बोसी 'भय यह अभिमान है  
 बन्त का ही है करिमा यह घरे'  
 जो यहाँ वह तू यहाँ महमान है।  
 पर उसी तिन स सदा मीने मुना  
 नीट सूर्य जब जब बना बिजली बफ्तन बुनती रही।

फूल की सारी कहानी घूम से  
 सौंभ जो कहती रही वह सब मुबह मुनवी रही ॥

छेड़ बैठा एक दिन मैं फूल को  
 म्यर्य हो तू कटकों में हूँस पड़ा  
 विद्व को मुसबू मुटाकर भी सगा  
 प्रमत्त में तू पत्थरों पर जा चड़ा  
 वह हँसा बोसा कि खुद को घाय-हित  
 दान करना ही घरे घमरत्व है  
 देवता के पीछ चढ़ तिससा निया  
 थेंप्टतर देवत्व स मनुजत्व है  
 बस इसी से गत दिन कबि की ब्रह्मम  
 पा पूणा भी विद्व में गुन प्रेम का गुनती रही।

फूल की सारी कहानी घूम से  
 सौंभ जो कहती रही वह सब मूबह मुनवी रही ॥

[नसेनी निसैनी निधेणी अभिरोहिणी=ऊपर चढ़ने का साधन यानी सीढ़ी। नसेनी जीवन का एक रूपक है। दो बाँस - हृदय और बुद्धि अथवा शरीर और आत्मा हैं। तीन डबे (सीढ़ियाँ) जीवन के तीन पन क्रमशः बचपन यौवम और बुढ़ापा हैं। धूम्रन जहाँ से हम इस आयुस्फी नसेनी पर चढ़ना प्रारम्भ करते हैं अम्म का प्रतीक है और छत जहाँ पहुँचकर हमारी यह चढ़ाई खतम हो जाती है और जहाँ जाकर अन्त में हम सो जाते हैं मृत्यु का प्रतीक है। कविता में प्राया हुमा 'धुन' दुःख का प्रतीक है! धुन बाँस झकड़ी धारि को भग जाता है तो वे भ्रष्ट हो जाते हैं। इन संकेतों को ध्याम में रक्षकर पाठक नसेनी' कविता को पढ़ेंगे।]

दो बाँस तीन डबों से बनी नसेनी यह  
 शो लड़ी सहन का जोड़ रही छत से नाता  
 धरती-भाकास घने जब से तब से इसपर  
 हर एक यहाँ चढ़-उतर, उतर-चढ़ता जाता।

धाँधियाँ धिरीं तूफ़ान बस, दूटे पहाड़  
 बदमा जम बदसी सदियाँ बदले सिंहासन  
 पर भव तक बदल नहीं पाया है क्षण भर को  
 इस मई-पुरानी सीढ़ी का ससृति-शासन।

कोई प्रांगण में कोई पहली सीढ़ी पर  
 काई हो पड़ा दूसरी पर पछताता है  
 पग धरने को है कोई बिकस तीसरी पर  
 कोई छत पर जाकर निज सेव विद्याता है

पचरज होना है कैसे बस दा बाँसों पर  
 है सभी सृष्टि इसनी बिदास इतनी भारी !  
 कैसे केवस पुन सग तीन इन ढंढों पर  
 बढ़ उतर रही है युग-युग से दुनियाँ सारी !

है यह भी एक प्रश्न में पूछ रहा खुद से  
 क्या सबका छत पर जाना यहाँ जरूरी है ?  
 घाना है क्या घनिवार्य सभी का प्रांगण म ?  
 क्या एक मसनी सिर्फ़ मिन्दगी पूरी है ?

उत्तर देता प्राणाम कि चढ़ना ही जीवन  
 भी मृत्यु उतरने का ही एक बहाना है  
 है जन्म-मरण बस तीन भीड़ियों की दूरी  
 सबको ऊपर जाना है नीच घाना है ।



अब युद्ध नहीं होगा "

३७

मैं सोच रहा हूँ अगर तीसरा युद्ध छिड़ा  
इस नई सुबह की नई कसम का क्या होगा  
मैं सोच रहा हूँ गर जमीन पर उगा खून  
मासूम हमो की पहल-पहल का क्या होगा ?

यह हसते हुए मुलाव महबते हुए जमन  
जादू बिखराती हुई रूप की यह बसियाँ  
यह मस्त भूमती हुई बसियाँ धानों की  
यह गोल सजस धरमाती गेहूँ की बसियाँ ।

गदराते हुए धनारों की यह मन्द हसी  
यह पैंग यड़ा-बड़ा धमियों का झूठसाना  
यह बसियों का सहरो के बाल खोम पसना  
यह पानी के सितार पर भरनों का गाना ।

मेनाघों की नटरटी टिठाई तोतों की  
यह दोर मोर का, मौर मूङ्ग की यह गुनगुन  
बिबली की कड़क तड़क, बदली की बटक मटक  
यह जोत जुगुनुषों की यह भीगुर की मुनमुन ।

किसकारी भरते हुए दूध से यह दूध  
निर्भीक उधलती हुई जबानों की टोली  
रति का दरमाती हुई चाँद की यह दाफ्तें  
सगीठ पुराती हुई पामसों की बोली।

घान्हा की यह ललकार, थाप यह दोसक की  
मूरा मोरा की सील कधीरा की घानी  
पनघट पर धपल गगरियों की यह खेदखाड़  
रामा की कान्हा से छुप-छुप घानाकानी।

क्या इन सब पर सामोगी मौन विद्या देगी  
क्या धुध धुध की बाकर सब जग रह जायेगा ?  
क्या झुकेगी कोपलिया कभी न दगिया म  
क्या पपिहा फिर न पिया को पाम मुसायगा ?

में सोच रहा युग जो इतिहास निरत -हा है  
क्या रक्त धुलेगा उमकी मादी म्पाही में ?  
क्या मासों के पहाड़ पर मूरज उमरेगा ?  
क्या शीत निसर्किया सेगा ध्यग तयाही म ?

क्या पिशाच पाट सेगी गघार टन फूषों का,  
क्या भूष अघेर का दामी हो जायेगी  
क्या श्वाभि पहून मगी अजीरें मोने की ?  
क्या घान्ति मरघटों म दिनकर मो जायेगी ?

क्या पी जायेगा रगिस्तान नर्मदा का  
क्या रंगत का मलाह भाप बन जायेगा ?  
मुद जायेगा क्या धीग हिमाखण योगी का  
विष्णुपाम में पतभार दुवारा धायेगा ?

मैं सोच रहा—जो फूल रहा खेतों में उस—  
 बचपन को गोद मिसेगी क्या सगीनों की ?  
 मिटकर मिट्टी के सर पर जो धर रहा ठाक  
 उस धम को उन्न मिसेगी टैक मशोनों की ?

जो धमी-धमी तिम्रुर दिये धर धाई है  
 जिसके हाथो की मेंहरी धव तक गीसी है,  
 भूषट के बाहर धा न सकी है धमी साज  
 हल्दी से जिसकी धूनर धव तक पीली है

क्या वह धपनी साइसी वहन साड़ी उतार  
 जाकर बेसेगी निब बूड़ियाँ बजारों में ?  
 जिसकी छाती से फूटा है मातृत्व धमी  
 वह माँ क्या दफनायेगी धूम मजारों में ?

क्या गोसी की धौधार मिसेगी सावन को  
 क्या डालेगा विनाश मूला धमराई में ?  
 क्या उपवन की डालों में फूलेंगे धँवार  
 क्या धूणा बजेगी भीरों की धहनाई में ?

धसहाय धुडापा तड़पेगा क्या मरधट में  
 बारूद करेगी क्या शूगार धवानी का ?  
 क्या मानवता पर विजयी दानवता होगी  
 क्या होगा धन्त पुराना नई कहानी का ?

धागक्य माकस एबिल सेनिन गांधी सुभाष  
 सदियाँ धिनकी धाबाजों का धुहराती है  
 तुमसी बजिस होमर, गोर्की धाह मिस्टन  
 धटानें धिनक गीत धमी तक धरती है

मैं सोच रहा क्या उनकी कलम न आयेगी  
जब झोंपड़ियों में धाग सगाई जायेगी  
करवटें न घदलेंगी क्या उनकी कब्रों जब—  
उमकी घेटी भूखी पय पर सो जायेगी ?

जब धायल सीना लिये एधिया नइपेगा  
तब दासमीक का धैर्य न कैसे डोसेगा ?  
भूखी कुरान की धायल जब दम तोड़ेगी  
तब क्या न खून फिरदौसी का कुछ बोसगा ?

सुन्दरता की जब साध सड़ेगी सडकों पर  
साहित्य पडा महर्नों मे कैसे सोयेगा ?  
जब केद तिजोरी में रोटी हो जायेगी  
तब क्कान्ति बीज कैसे न पसीना बोयेगा ?

हंसिये की जग छुड़ाने म रस है किसाम  
है नई मोक दे रखा मन्नूर बुधामी को  
नम बसा रहा है नये सितारों की वस्ती  
भू सिये गोः मे नये छून की साक्षी को ।

बड़ चुका महून घाम रय धव निर्माणों का  
बम्बों के दसबस मे धवरुड नहीं होगा  
है क्कान्ति दाहीवों का पड़ाव हर मजिस पर  
धव मुड नहीं होगा धव मुड नहीं होगा ।





## जीवन मल ।

दूध

रह चुकी बहुत बरसात क्रम में मेघों की  
उसको जमीन पर धर उतारना ही होगा  
घरमीले नम के सुरक्ष चांद सितारों को  
पानी का यह धूँध उभारना ही होगा ।

निर्जीव पड़े लसिहाम जेत दम लोड रहे  
है सिसक रहे बन वाग कराह रहे धारे  
हो गये पीलिया से पीसे सब पेड पात  
धर गई सुभों की सपटें परागाह प्यारे ।

हल की हिचकी बघ रही हिचकता है हंसिया  
विषका कुरपी घसहाय भलाय कुदासी है  
है साँस टूटती मध अवान ह्मोड़े की  
बिद्युत उतारती नये धान की बाणी है ।

सूखे से हैं बीमार कुर्ये, बापी तडाग,  
प्यास बंठे पमघट पर गीत गमरियों के  
गध लाकर भेटी हैं लामोश नहर-भदियाँ  
हैं ठर सये तट पर कंचास ठठरियों के ।

पूनों की भावों पर खाते सारे पद्याइ,  
 मुरदा तितलियाँ कजल भोड़ हैं कलियों का  
 षड् भाषा मलय-समीरन को कासा बुझार  
 सब गून तपेदिक भूस गई पच-गलियों का ।

हैं केन डालते वन रैभानी हैं गाये  
 दोहात फिर रहे वदने मय भीराये से  
 कृत विल्की ताता मैना बोयन बोय  
 पाबास देखते सब टकटकी भगाये से ।

प्राप्ते दो शीघ्र घरा पर सावन की पुहार  
 धन्यथा समय की प्यास सि-पु बन आवेगी  
 यदि जस न मिसा तो सख्य मान भोषासमान ।  
 यह मिट्टी शोणित के संभाव युसावेगी ।

नीची हा जाती हैं शोणियाँ पहाड़ों की  
 जब प्यास लहान कर अपना शीघ्र उठाती है  
 भोज को पाँव बिकस हो उठते हैं सागर  
 जब वह निर रैगिस्तानी मजदर पुमाती है ।

उमकी मुट्टी में गन्द पडे घाँधी भयङ्क  
 पस में करघट सेती हसपल भूबासी का,  
 साँसों में बिनगारियाँ हजारे भद्रुसाती  
 घोठों पर कान्ति, करों में भास मगासा की ।

घब भी संभाग से होत ! हया की दख जरा  
 जबीर शोन द शीघ्र चिन्दगी क जत की  
 घब भी है समय छाड मिहामन घवर का  
 भाज ही भाज की मित्र न कर चिन्ता बस की ।

यह जीवन-जस है भासमान का नहीं मूढ़ !  
 धरती ने दिया उधार धरा का यह धन है  
 तेरा मन में ही इसे रोक रखने का प्रण  
 तेरे विनाश का सबसे पहला कारण है ।

ज्यादा दिन तक रह सकती नहीं धरा प्यासी  
 धम दूटेगा पानी के पहरेदारों का  
 बस नहीं सकेगी साबिध और सितारों की  
 रह नहीं सकेगा सूना जमन बहारों का ।

तू उसे किसी भी ऊँचाई पर बने कद  
 वहन को तो पर जल नीचे ही धायेगा  
 उतमी ही और तेज होगी उसकी फुहार  
 जितना ही ऊँचा उसे बसाया जायेगा ।

यह बादल भाप-धुर्य के गुब्बारे हैं बस  
 इनके बस का अभिमान स्वयं को छसना है  
 धरती की एक फूँक से ही उड़ जायेंगे  
 बस धरा देर है किसी हवा का जमना है !

तो वह धाई पुरवाई, छाई वह बहार  
 वह जमकी बिजसी वह मोरों ने किया शोर  
 वे सजे झूमने सेठ धिरकने सजे बाग  
 वह कभी जी गई गली हो गई वह विभोर ।

वह गाने सगी धाम की जाम-जाम भूसा  
 वह साल सजा हो गई कुमारी कोयलिया  
 वह मन्त्री बंस की पण्टी वह धमकी पायल  
 वह मस्त बजाने लगा मुरलिया साबसिया ।

बोझार पडी वह, भींग गई वह नई बहू  
 वह बादल गरजा वह साजन ने गही बाह  
 बे जुगनु चमके किसक उटे बे ग्वास-वास,  
 वह कजसी बोसी वह विरहा कर उठा 'भाह' ।

३। बाँध सका है कौन समय के साजन को  
 वह एक साथ साक्षों स्वर में सहराता है  
 ओ उसे कैंद करता है बादल के समान  
 मिट्टी पर गिर कर लुद मिट्टी हो जाता है ।



## फूलों का विद्रोह

३६

कैची से काटों की तो क्रान्ति कतर डामो  
यह फूलों का विद्रोह कौन बल रोकेगा ?  
भा रही सुरभि की बाँधी जो हर उपवन में  
पतझर कौन-सा है जो इसको टोकेगा ?

रे ! गाय नहीं बाँधी आ सकती ताकत से  
बह तूफानों के वास सोल सहराती है  
गाती है जब वह बैठ पिता की सपनों में  
मरमट की मिट्टी तक से क्रान्ति उगाती है !

कोमल हैं कसियाँ धीर पंखुरियाँ नाचुक हैं  
धायल कर सकती खुशबू किन्तु पहाड़ों को  
गुनगुदा जगा सकती मुर्दा चट्टानों को  
तसवार बना सकती धाँसू की धारों को !

गरमा देती है सर्द बर्फ के सीने को  
प्रसमय जब कोई फूल कहीं मुरझाता है  
हल की नोकों की धार तेज कर देती है,  
जब सून पामीनों पर इतिहास बिछाता है !

जब कभी खोसती है वह अपने पवन-पक्ष  
सोहे की दुनियाँ सौरभ से भर जाती है  
टीकों की छाती पर हंस उल्लेख फूल-पात  
वाह्य कलो की धीरों में धरमाती है ।

'चेरी' के घोठे पर सुर्ती दौड़ती उधर  
नगिन के गालों पर इस घोर ससाई है  
उस विशा किस रहे है विजयी के साम फूल  
इस दिशा प्रेगाने पर बहार घोर है ।

पम्पा गुलाब जूही घेसा केतकी कमल  
सबने हाथों में पम्पल पिक्कारी है  
माली हो जा हुगियार कि उरे तन-मन स  
होती बेसी जाने की मम तनारी है ।

यह रगों का जो वस्त्र बुना है धरती मे  
तेरी फ्रीसादी कंबी काट न पाएगी  
भूमे से भी पड गई घगर तुफ पर फुहार  
यह इम्पाती ससाय नागज हो जाएगी ।

मत्त इसे उद कर इन चाँदी के महमों में  
बाणी धर की ही दीवारें हो जाएंगी  
मत्त हाथ बड़ा इसके दूने की घो पागल !  
दुस्मन कर की ही तसबारें हो जाएंगी ।

तू फूल न इस पर फर सीत बस यह इमके—  
किस भाँति विश्व में मधुच्छतु भाया जाता है  
कैसे बिनाघ पर विजयी होता है बिनाघ  
किस तरह फूल में फूल गिनाया जाता है !

कैसे यह विष-बयम्भ मिटेगा दुनियाँ से  
 कैसे समता का स्वरा सवेरा आएगा ?  
 कैसे मिस की चिमनी का धुँआ साफ़ होगा  
 कैसे किसान निज हंस को ताज पहनाएगा ?



सम्यता कहीं आ गई



४०

सम्यता कहीं आ गई ? कहीं सड़ा है विश्व ?  
 आ रहा है बिपर गति रय विज्ञान-कलाओं का ?  
 किस दिशि उन्मुक्त इतिहास ? दे रहा क्या विश्वास ?  
 क्या दोर समय का है ? क्या जोर हवाओं का ?

क्या यही सम्यता का वह सुन्दर सुलद स्वर्ग ?  
 है पड़ा जहाँ पग-पग पर मुदों का पड़ाव  
 बिब रहा जहाँ नारीत्व रजठ के दुबड़ों पर  
 पूसों के दाव पर जहाँ शृगासों का जमाव !

क्या यही कसा की बिब धनमोस धजस्ता है ?  
 मकड़ी-मकड़ों ने जहाँ तान रक्तों पास  
 घोंसले बने हैं जहाँ उमूकों - पिढों के  
 धजवर विण्छू साँपों व जहाँ बीम वात !

यह जसते महस - मकान तबपते गली - गाँव  
 यह भूसा भूखमरी, मूसा बाड़ भकास - त्रास  
 यह ध्वस्त धरा यह बम्ब पुँ सघायस तभ  
 बिज्ञान दसी को बहना क्या मानव बिकास ?



सम्मुख महराजा है सोहू का प्रवल सिन्धु  
इतिहास यहीं तक बस क्या बसकर धामा है ?  
मानव मानव व नीच भूरा की बन्दूकें  
क्या यही प्रगति जब तक मजहब कर पाया है ?

बाइबिल के स्वर्ग छप्पों पर गोली के बखर  
क्या काइस्ट, खेकसपियर खेसी का यही देश ?  
कर में ऐटम मस्तक में युद्धों के मक्दो  
मिकन वाधिगठन इलियट का क्या यही देश ?

क्या बास्मीकि का यही तपोवन पावन है ?  
सीता की साड़ी जहाँ उतार रहा सोना  
क्या यही सूर का बुन्दावन मनभावन है ?  
राधा से जहाँ जमाना करवा धमहोना ।

गांधी का देश यही ? सुभाष की यही भूमि  
है जेद जहाँ आजादी सेफ तिजोरी में ?  
बेदों उपनिषदों गीता का क्या यही मर्म  
हो जाम भादमी बन्द नाज की बोरी में ?

मैं सोच रहा हूँ इस गति से बलकर समीत  
किस ओर धाममी की किस्मत से जायेगी ?  
ऐसे ही गर बिज्ञान जाटवा रहा सद्  
दुनियाँ सारी कितने दिन सँर मनायेगी ?

करती है जब विद्रोह प्रकृति होकर धमीर  
धादमी स्वयं तब अपनी मौत बुझाता है  
जब बस धजमाता है निज पौरुष निर्बल पर  
तब उसका ही निर्माण उसे जा जाता है ।

धर भी है समय नहीं कुछ पगला बेर हुई  
 लोहे के य बोम्बेसे बस्त्र उतारो तुम  
 धाँसों से यह सोने का सुरमा दूर करो  
 ले प्यार धाँस में भू की ओर निहारो तुम ।

सारे कठों स एक साथ मिलाकर गाभो  
 वह गीत कि जो सबके गीतों को गाता है  
 जिसकी मय तान धमर है, कमी न दूटी है,  
 वह गीत—जिसे जग कहता धरती माता है ।



यह हृदय है --

५१

मठ इसे समझो जिसीना प्राण प्रेयसि !  
यह हृदय है यह हृदय है यह हृदय है  
यह किसी कवि का दुखी कवि का हृदय है !

यह किसी की कल का बुझता दिया है  
मृत्यु ने शृंगार खुद जिसका किया है,  
स्नेह इसका जस चुका कम जान, जाने  
रक्त निज पीकर अभी तक यह जिमा है  
भाँधियाँ इसके बुझने को मुकी हैं,  
भूमने को भी सड़ा धँसड़ भ्रमय है ।  
यह किसी कवि का दुखी कवि का हृदय है ॥

धक में इसकी धनस मुस्का रही है,  
भाँध म कारी बवरिया छा रही है  
भय धधरों में महस्यल की पिपासा,  
शुष्म बुसबुल कण्ठ में प्रकृमा रही है  
गीत में इसके किसी की याद रोती  
धीर धाहों में बकी सोती प्रलय है ।  
यह किसी कवि का, दुखी कवि का हृदय है ॥

दबछा खुद, पर किसी का यह पुजारी  
 जीत कर यह हारन बासा खिलाडी  
 दान करने के लिए सर्वस्व भपना—  
 माँगता जो भीख यह ऐसा भिखारी  
 यह स्वयं मंजिल किसी की पर मुसाफिर  
 खुद पराजित पर किसी की यह विजय है ।  
 यह किसी कवि का दुखी कवि का हृदय है ॥

सौंभ इसके पय पर दीपक जलाती  
 रात इसकी सेज पर सपने सजाती  
 है चढ़ाती फूल इस पर मुग्ध उपा  
 धौर गाकर गीत कोपसिया जगाती  
 सृष्टि का सन्नाह यह फिर भी किसी क—  
 बस चरण पर लोटता इसका प्रणय है  
 यह किसी कवि का दुखी कवि का हृदय है ॥

फूल पर मुस्कान इसकी नाचती है  
 बादलों से छाँव इसकी भाँकती है  
 बह रहे छारे इसी की ही कहानी  
 पीर पपिहे में इसी की काँपती है  
 प्यार के दा घोस मुनने के लिए पर  
 बह किसी क सामन चिर मौनमय है ।  
 यह किसी कवि का दुखी कवि का हृदय है ॥

छू रहा है हाथ इसका ही गगन को  
 द्यास इसका ही महज घामें पवन को,  
 बन्द घाँसू में इसी क मिथु सो सो  
 गोबली है मुक्ति इसके ही चरण को  
 पूमने का किन्तु फिर भी पय किसी क—  
 यह मदा पारापना में मौन-मय है ।  
 यह किसी कवि का, दुखी कवि का हृदय है ॥

दूटता यदि यह कभी जाने भजाने,  
 दूट जाते सृष्टि के सपने सुहाने,  
 विश्व में पतझर वह धावा भयानक,  
 मौन हो जाते सकल गाने - तराने  
 बाढ़ वह धापी धरा पर भाँसुओं की  
 डूब जिसमें विश्व क्या जाता समय है ।  
 यह किसी कवि का दुखी कवि का हृदय है ॥

क्यों कि यह मनमोह वह हीरा सुहासिन !  
 जो जिसे सभ्राट् भी निर्धन भक्तिभक्त  
 और पाकर भिक्षु भी जिसको मिमिप में,  
 है बसा सकता धरा पर स्वर्ग-नन्दन  
 चाहती तो खूब तुम बेसो इसी से—  
 तोड़ मत देना यही बस एक भय है ।  
 यह किसी कवि का, दुखी कवि का हृदय है ॥



सत्य का निर्माण करता”

४२

सत्य का निर्माण करती स्वप्न की अन्तिम धारण हो ।

दीप अम्बर के बुझाकर बिस्व में नित प्रात आता  
छीन कर जीवन भरा का धन गगन मे मुस्कराता  
कर हजारों घर तिमिरमय एव जसता दीप सुख का  
एक डमता अथु तब अब ज्वास में बल प्राण आता  
सृष्टि का सहार करता सृष्टि का मूलन मूलन ही ।  
सत्य का निर्माण करती स्वप्न की अन्तिम धारण हो ॥

यामिनी के अथु से घुसती कृसुम-वसि की मुघरता  
अथु बनकर ही सदा भरती नयन स प्रीति कविता  
एक गिरता अथु जब बनकर समर्पण पूर्णता का—  
मोन हाहाकार कर पापाण पूजा का पिमसता  
निर्बसों का बल सदा है एक दुबल अथु करण ही ।  
सत्य का निर्माण करती स्वप्न की अन्तिम धारण ही ॥

घोर तम की ही दिशा से ज्योति पहसी फूटती है  
दग्ध उर की भाग से ही धार जम की फूटती है  
धिर-निराशा से सदा होत्री उदय घागा मुनहसी  
वासना में साधना की मीद सहसा टूटती है  
मुक्ति पथ निर्देश करता विद्व ब्रह्मन का करण ही ।  
सत्य का निर्माण करती स्वप्न की अन्तिम धारण ही ॥

## प्राण की घड़कन\*\*

४३

प्राण की घड़कन बनी जो प्राण की मर-प्यास ही है ।

प्यास ही वह है कि जिससे विश्व के मधु की मधुरता प्यास हो—जिससे निखरती प्राण-प्यासे की सुभरता दग्ध उर की प्यास ही वह जो उपेक्षित हो जगत से है गरस को भी सदा समकारती बनकर भ्रमरता, मृत्यु को सलकारती जो मृदु दुःख की साँस ही है । प्राण की घड़कन बनी जो प्राण की मर-प्यास ही है ॥

प्यार ही वह छाँह में जिसकी हृदय का ताप पसता वह घसभ जिसके प्रणय-बसिदान से मुग-शीप जसता चिर-विवश कवि के सजस दो धाँसुधों का हास ही वह बिंद्व के दुःख का विकल ज्वालामुखी जिसमें मचसता पर मचसती मुक्ति जिसको वह प्रणय भुज-याध ही है । प्राण की घड़कन बनी जो प्राण की मर-प्यास ही है ॥

एक सुख की साँस ही वह जो भ्रमरता को लजाती मधु की ही बूँद है वह जो न मरु में सूख पाती एक घन्तिम घास ही वह जो प्रतिध्वनि बन पिता की दे चुनीती नाश की भरादय की छाती हिलाती, संतय को जो वे चुनीती स्वप्न का बिदबास ही है । प्राण की घड़कन बनी जो प्राण की मर-प्यास ही है ॥

## श्री अरविन्द की सात कविताओं के अनुवाद

दिव्य सुमन (Rose of God) का रूपान्तर

४४

नम-नीलम पर ब्रह्म की गुण रेखा सम भक्ति दिव्य सुमन !  
मानन्दोत्पल ! आग्नेय मधुर ! चेतन-सत्-सप्त-सदन रजन !  
वर्णनातीत क प्रेम-गुण्य ह फिर रहस्यमय मुदु कलिका !  
मानव-मानस में घघर उठा हे धमस्कार ह ज्योति-निधि !  
घस्तित्व शिखर पर परम ज्ञान-विज्ञानोदय के गण-स्वास !  
हे ज्योति ब्रह्मण्डल फिर दिव्य-दृष्टि-घनतन्मयमर्म, दारदत प्रकाश !  
पाहुन मंगल बना के गुण हे महाबाहशीपस्व सूय !  
मृतस क मानस में उतरो हे हिरण्यगन मधुगण्य तूर्य !  
हे फिर घनन्त के घयण-भोज-वध-भूनिमन्त मानन्द ब्रह्मण्डल !  
हे शक्ति-मुमन हीरक घाभा से भेद निपा-जम घन दुर्दम !  
हो दीप्त मनुज संकल्पों में धायोजन पूण करा अभिनव !  
प्रतिमा घमरय की घमरित की ह अतन के फिर जानात्रय !  
हे निधोत्पल, गुण दिव्य-काम भावना घमनरित स्वरा-द्वयाम !  
जोयन प्रमून ! घमन्स सज्जित गोभायुत ध्वनि-स्वर-वरा-धाम !  
घनुपम मधुमय घन्नाष्टि में वदना यह मानव-मत्स्य-दह !  
भू-स्वर्ग एक हो काम विविध-मनु-मन्तति मृत्युञ्जय घजय !  
मानन्द ब्रह्मण्डल ! दारदत दृवि पर घान-दारदित सहज गोभित !  
हे प्रेम-गुण्य, घनिम प्रनीप्त, धी-नीप्त चेतनान्तर-मणि-शुक्ति !  
मानस-ईप्ता से जाग उगे है निमक रही जा जड़ादान्त !  
मोन्दर्यानिन्त विपुम्बिल जग-जीवन हा दारदत ज्योति प्राप्त !



## वज्र और आरमा (Tree) कबिता का अनुवाद

४५

स्वर्गनिरक्त संकत-तट पर तट लड़ा एक  
नम्र धीरे मुनाषों सी दाखाए फैलाता ।  
हो विफल किन्तु जड़ धरती के प्राङ्मर्षण से  
ऊपर न मृत्तिका की माया से उठ पाता ।  
यह है धारमा, मानव स्वरूप जिसकी धारवत स्वर्गिक उद्धान  
है नीचे रोके हुए सबे रजपात-मद मन देह प्राण ।

## जीवन और मरण (Life and Death) का अनुवाद

४६

जीवन-मरण मरण-जीवन दो दार्ष्ट्य युगों से भरमा रहे मृत्ति जग की दीर्घत विरोधी कर उग्रमुख अक्षिप्त्य सत्य फिर मानस-सम्मुख गुप्ते युगों के द्विपे हुए सब पृष्ठ प्रबोधी । जीवन है संक्षिप्त मृत्यु यदि, स्वयं न दोष है, जन्म-मरण का मरण-जन्म का उपवेग है ।

## निमन्त्रण (Invitation) का हिन्दी रूपान्तर

४७

निधि-दिशि गजित ऋतु-धन प्रलय प्रमथन म्दन म्दन  
किन्तु चिस्तर से चिस्तर चिस्तर—मैं बढ़ता जाता  
कौन चलेगा साथ चड़ेगा कौन गहन गिरि  
हिमस्रष्टों जस पूर्णवर्ति पर मुस्काता ?

मैं न तुम्हारे नगरों की सीमा में सीमित  
बन्द नहीं मैं घर की दूषित प्राचीरों में  
मेरे चिर पर मेरे प्रभु का मीस गगन है  
खडा हुआ मैं मुक्त धारियों की भीड़ों में।

खेस रहा एकाग्र संग मैं निज प्रवेश में  
दुल दुदिन, दुर्माय्य विपत्ति का मित्र बनाये  
कौन पवन प्रक्षामित जो इस दूर बिजन में  
धाकर मुक्त स्वतन्त्र निज निधि वर्ष बिताये ?

मैं स्वतन्त्र सन्नाद पर्वतों तूफानों का  
स्वाभिमान स्वातन्त्र्य - शक्ति चेतना धमर धर  
प्रिय हो जिसे विपत्ति हड़बड़ी पुष्पकृती जो  
संग यह मेरे रह राज्य में मेरे चसकर।

## विजय गीत (Triumph Song of Trichanku)

४८

मैं न मरूँगा ।

जब आत्मा इस मर्त्य देह से चक जायेगी  
और पिता की सपटों का भोजन होगा तब  
पर तब तो यह मर्त्य जयेगा किन्तु नहीं मैं !  
उस पित्रदे के छोड़ मिसेगा मुझे विश्वास व्योम का शोना  
कुर मरण के घासिगन को घोला देकर मेरी आत्मा  
दूर बहुत हो जायेगी सूखी बरों से  
रात्रि सूर्य को अपनी ठडी गहराई में छिपा रखेगी  
निश्चय होगा अन्त कास का  
निरप परिधम करने वामे तारो को भी मुक्ति मिसेगी  
मेकिन अस्त न मेरा होगा,  
अन्तहीन मैं सदा रहा हूँ  
सदा रहूँगा ।

प्रथम सृष्टि का वीर गिरा या जब अरुती पर,  
उससे भी पहले जीवर मैं पृथ हुआ था  
और कि अब जब ठंडे हो जायेंगे सब मरण अजन्मे  
तब भी मेरी जन्मा असेगी सृष्टि-मृत् पर !  
मैं हूँ तारों का प्रकाश

सिंहों का बल,  
 सुप्त अ्यात्रों का  
 मैं हूँ पुरुष, प्रकृति भी' वास्तव,  
 मैं असीम हूँ मैं अनादि हूँ मैं अनन्त हूँ !  
 एक वृक्ष मैं  
 ओ एकाकी खड़ा हुआ इस महाकाश में,  
 तुहिन बिन्यु का मोन पास मैं,  
 मैं अपार सागर जीवन का ।  
 आकाशों को हाथ उठाये,  
 सृष्टि-प्राण भरती का मैं पालन करता हूँ,  
 एक चिरतन चिन्तक या मैं अन्म समय भी  
 धीर रहूँगा—  
 मैं असीम हूँ, मैं अनन्त हूँ ।





बेतमासीन चिर दीपि । कमल कुञ्जा मं तुम  
 मैं कहीं तुम्हारे हनु यजार्ज शुभ भासन,  
 तव उम्मति - पम रत चरण हेतु यह हृदय-पटल  
 पाटल प्रभात - सा धरण, बनेगा सिंहासन ।

जो कुछ जग में अप्रिय वह तुम्हें भसल सदा  
 मैं सदा रहूँगा निष्कलंक चिर पूर्णकाम  
 ओ विद्व-भूमि - धनुर्विज्ञ सुखस सीन्दर्य - शक्ति  
 मम मन में चिर चिर दीप्त करो निज दीप्ति-धाम ।

तुमको न सहन पत एक हृदय बंजड़-बीहड़  
 तुम सदा पहनतीं धमर प्रम के छन्द - बग्य  
 मापुर्व्यमयी ! धपनी धनुपम जादुह - छवि स  
 मानस - मरु धवल बना दा शापत-स्नेह सिम्पु ।

## स्वप्न-सरी (Dream Boat) का हिन्दी रूपान्तर

५०

ज्योति शिक्षा-सी भ्रुकुटि प्रदीपित तप्त कांचन सदृश शरीर,  
स्वप्न-स्वाप्ता निमित्त नौका में भाया था वह मेरे तीर।  
बोसा—साथ बसोगे क्या तुम अन्तराग्नि है क्या तैयार ?  
नीरवता हो गयी ध्वनित बन एक निगूढ़ भयुर भ्रकार।

अन्तर की बिभ्रान्ति-गुहा में छिपा हुआ कुछ उठा सिहर  
जीवन का फिर बाँधित मुक्त सब स्मृति-पटल पर गया दिखर।  
सोचा जब आनन्द गया वह त्याग सदा को प्रतिनि समान  
स्वप्न-सरी तिर गयी हो गया स्वर्ण पुल्प वह अन्तर्ध्यान।

सोकान्तर क रिक्त धूम्य में ही अब है उसका आवास,  
प्रेम शिक्षा बुझ गयी मिटा सब पूर्व हास आनन्द विनास।  
अस्त हुआ सौभाग्य, रिक्तता ही है अन्तः पूर्ण विराम  
प्राप्ति स्वप्न-सरी न, न आता वह हिरण्यमय देव अनाम।

